धृति क्षमा दमोस्तेयं शौचं इन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

Regd. No. 58414/94

स्वामी रामानन्द जी द्वारा संचालित

हमारी साधना

त्रैमासिक

वर्ष 31 • अंक 4 • अक्तूबर-दिसम्बर 2024

मूल्य रु. 25/-

श्रीगुर पद नख मनि गन जोती। सुमिरत दिब्य दृष्टि हियँ होती॥

करुणामयी सुमित्रा माँ

हमारी साधना

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्।।
न त्वहं कामये राज्यम्, न स्वर्गं नापुनर्भवम्।
कामये दुःखतप्तानां, प्राणिनामार्ति नाशनम्।।

वर्ष : 31 अक्तूबर-दिसम्बर 2024 अंक : 4

भजन

बरनत जसु सुर नर मुनि हारे।
कुसल करन दुख हरन सदा के हरि जू चरन तिहारे।
जिनकों परम प्रभाव प्रगट अस संतत अधम उबारे।।
सपनेहुं टेक गही जिन इनकी परिहरि सकल सहारे।
भव सागर में बूड़त नैया तिनकी लगी किनारे।।
पद रज परसि पतित खल कामिहुँ सुरपुर सहज सिधारे।
सुरसरि प्रगट भईं इनते जिन जग ते जम ललकारे।।
रामसरन तव द्वारे ठाड़ो माँगति कोंछ पसारे।
अस पुनीत पद पंकज निसिदिन हिय में बसहिं हमारे।।

भजन संख्या 11 **- स्व. श्री सूर्यप्रसाद शुक्ल जी 'रामसरन'**

प्रकाशक
साधना परिवार
स्वामी रामानन्द साधना धाम,
संन्यास रोड, कनखल,
हरिद्वार-249408
फोन: 01334-311821
मोबाइल: 08273494285

सम्पादिका
श्रीमती रमना सेखड़ी
995, शिवाजी स्ट्रीट,
आर्य समाज रोड
करोल बाग,
नई दिल्ली-110005
मोबाइल: 09711499298

उप-सम्पादक
श्री रमेश चन्द्र गुप्त 'विनीत'
1018, महागुन मैंशन-1,
इन्दिरापुरम,
गाजियाबाद-201014
ई-मेल: rcgupta1018@gmail.com
मोबाइल: 09818385001

विषय सूची

क्र.सं.	विषय	रचयिता	पृ.सं.
1.	चित्र – करुणामयी सुमित्रा माँ		2
2.	भजन	स्व. श्री सूर्यप्रसाद शुक्ल जी 'रामसरन'	3
3.	सम्पादकीय		5
4.	भजन – अभिलाषा (पुरानी पत्रिका से उद्धृत)	श्री साईंदास 'ऋषि', मेरठ	6
5.	भजन – अन्वेषण (पुरानी पत्रिका से उद्धृत)	श्रीमती सन्तोष नागिया, दिल्ली	6
6.	गीता विमर्श – धारावाहिक	स्वामी रामानन्द जी	7–9
7.	गुरु वाणी – धारावाहिक		10
8.	Letters to Seekers – धारावाहिक		11–14
9.	भजन – वन्दना (पुरानी पत्रिका से उद्धृत)	श्री निर्भीक, रामनगर	14
10.	भागवत के मोती – धारावाहिक		15
11.	साधना धाम की विभूतियाँ – धारावाहिक		16–19
12.	एक प्रभु का सहारा	रमना सेखड़ी	19
13.	श्री गुरुदेव सत्संग-सुधा (पुरानी पत्रिका से उद्धृत)	श्रीमती सन्तोष नागिया, दिल्ली	20–23
14.	जो चाहता दीन बन्धु को तो दीनों को बना अपना (पुरानी पत्रिका से उद्धृत)	सुश्री शकुन्तला ऋषि, मेरठ	24–25
15.	जन जन के त्राता श्री गुरुदेव (पुरानी पत्रिका से उद्धृत)	श्रीमती शकुन्तला ऋषि, प्रभाकर	25–26
16.	स्वामी रामानन्द जी की आध्यात्मिकता देन (पुरानी पत्रिका से उद्धृत)	श्रीनिवास जोशी, अल्मोड़ा	26–27
17.	हर देश में तू, हर वेश में तू (कल्याण से उद्धृत)	श्रीमती कमल जी राठी 'साधन'	28
18.	साधक का कर्तव्य (कल्याण से उद्धृत)	ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्री शरणानन्द जी महाराज	29
19.	शिष्यों के जीवन में रंग भरने वाला चित्रकार है गुरु	संकलन कर्त्ता: पी.बी. श्रीवास्तव	30
20.	कानपुर साधना शिविर-2024 – विवरण व प्रवचन सार		31–34
21.	बीसलपुर साधना शिविर-2024 – विवरण व प्रवचन सार		35–38
22.	11.8.2024 से 9.11.2024 तक के 2100/- से ऊपर दानदाताओं की सूची		39
23.	श्री स्वामी रामानन्द जी साधना साहित्य		40
24.	दिसम्बर 2024 में साधना-धाम में होने वाले कार्यक्रम – सूचना		41
25.	स्वामी रामानन्द तपस्थली, दिगोली – पूज्य गुरुदेव का जन्म दिवस समारोह – सूचना		42
26.	विज्ञापन – GITA VIMARSH (English Translation by Shri Krishan Goel)		43
27.	पूज्य गुरुदेव का जन्म दिवस समारोह एवं शिविर – निमन्त्रण		44

Printed and Published by Shri Dinesh Bahl for and on behalf of Swami Ramanand Sadhna Pariwar, Sadhna Dham, Sanyasa Road, KANKHAL-Haridwar (Uttarakhand) and printed at Rakmo Press Pvt. Ltd., C-59, Okhla Industrial Area Phase-I, New Delhi-110020.

सम्पादकीय

हमारी साधना के आदरणीय पाठकों को सम्पादक मण्डल का प्रेम भरा नमस्कार!

राम राम!

'जीवन नैय्या के खेवैया सद्गुरु हैं। बिना उनकी कृपा के न तो ज्ञान प्राप्त होता है, न ही हमारी नैय्या पार लगती है। सद्गुरु सूर्य के समान हैं तो वह चन्द्र के समान भी हैं। सूर्य का काम विकास करने का है और चन्द्र का काम पोषण करने का। सद्गुरु जीवन को विकसित करते हैं, उनकी कृपा से आध्यात्मिक विकास सम्भव है।'

ये वचन हैं आध्यात्मिक गुरु पूज्य रमेश भाई ओझा जी के। हमारे गुरुदेव पूज्य स्वामी रामानन्द जी यद्यपि हमारे मध्य में स्थूल रूप में उपस्थित नहीं हैं, उनके साहित्य से और शिविरों से हमें पर्याप्त मार्गदर्शन मिलता है। गत तिमाही में दो शिविरों का आयोजन हुआ है – एक कानपुर में और दूसरा बीसलपुर में। बीसलपुर शिविर का महत्व इसलिये अधिक है क्योंकि पूज्य गुरुदेव ने इस स्थान को अपना मुख्यालय बनाया था।

इन दोनों शिविरों में प्रबुद्ध साधकों द्वारा जो प्रवचन किये गये थे उनका सार यथा सम्भव इस अंक में लिखा गया है। त्रुटियों के लिये सम्पादक मण्डल क्षमा-प्रार्थी है।

प्रबुद्ध पाठकों से निवेदन है कि वे पत्रिका में प्रकाशन योग्य सामग्री समय-समय पर सम्पादक अथवा उप-सम्पादक को प्रेषित करते रहें। साथ ही पत्रिका के स्तर में सुधार के लिये पाठकों के सुझाव भी अपेक्षित हैं।

आगामी तिमाही में होने वाले कार्यक्रमों की जानकारी भी इस पत्रिका में देखने को मिलेगी जिनमें 16 दिसम्बर को होने वाला 108वाँ प्रकाशोत्सव विशेष है।

धन्यवाद!

अभिलाषा

(पुरानी पत्रिका से उद्धृत)

श्रीराम तुम्हारे द्वारे पर, इक दीन भिखारी आया है।
पात्र तो उसके पास नहीं, पर नैन कटोरे लाया है।।
सुना राम का नाम दयानिधि, वह दया भी करेंगे कभी न कभी।
अब अपना आपा सौंपन को, वह नत मस्तक हो आया है।।
नैया इसकी मंझधार में है, कोई खेवन हार नहीं मिलता।
कर आस तुम्हारे चरणों की, यह साहस करके आया है।।
तुम तारन हार कहावत हो, अब पार करो जीवन नैया।
वह भटक रहा है जन्मों से, माया ने उसे भरमाया है।।
वह तुम में बसे तुम उसमें बसो, करो पूर्ण ऋषि की अभिलाषा।
बाकी न रहे कुछ भी उसका, मस्तक चरणों में निवाया है।।

– श्री साईंदास 'ऋषि', मेरठ

अन्वेषण

(पुरानी पत्रिका से उद्धृत)

ढूँढ रही मन के उपवन में, शुचि सुन्दर पुष्पों को आज।
निज प्रियतम की पूजा हेतु, सकल सजाऊँ पूजन साज।।
वह शक्तिमान सम्राट महा, वैभवशाली ऐश्वर्यवान्।
माँ जगदम्बा का मधुर रूप, शोभा अनुपम, सौन्दर्यवान्।।
इस जीवन का प्रत्येक श्वास, उस देव की जय जय कार करे।
जिसने यह जीवन दान दिया, और सभी मेरे सन्ताप हरे।।
पथ दिया समर्पण का जिसने, और हल्के सारे भार किये।
उस देव के सुन्दर चरणों पर, मम रोम-रोम बलिहार हुए।।
दस वर्ष हुए या युग बीते, यह कठिन प्रतीक्षा भारी है।
आँखें सूखी, हृदय सूखा, सूखी उन बिन संसारी है।।
अब कृपा करो हे दिव्य नाथ, इस सूखेपन को हरा करो।
लाओ वसन्त फिर जीवन में, आ मन-उपवन में मिला करो।।

– श्रीमती सन्तोष नागिया, दिल्ली

गीता विमर्श
अध्याय 6
(गतांक से आगे)

जितात्मा की क्या स्थिति होती है?

जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः।
शीतोष्णसुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः॥ 7॥

'जो जितात्मा है, जो प्रशान्त हो गया है उसकी आत्मा परम समाहित रहती है सर्दी तथा गर्मी में, सुख-दुःख तथा मान और अपमान में'॥ 7॥

'समाहित का अर्थ है सम, साम्यावस्था, विषमता से रहित स्थिति। परम समाहित-बिल्कुल अविचल, एक सी। जिस पर कोई प्रभाव ही नहीं होता द्वन्द्वों का। जहाँ भीतर सदैव चैन रहती है।

सर्दी-गर्मी व्यक्ति को चलायमान करती हैं। किसी को कुछ अनुकूल है, किसी को कुछ। अतः जो अनुकूल होता है उसमें व्यक्ति आनन्द प्रतीत करता है, प्रतिकूल में तनाव हो जाता है। उस प्रतिकूल स्थिति को भगाना चाहता या स्वयं उससे भागना चाहता है। जिसने जीता है अपने को, उसके तो तन पर भी प्रभाव नहीं होता। सर्दी और गर्मी में वह सम रहता है, नीरोग रहता है।

सुख तथा दुःख में और मान तथा अपमान में वह बिलकुल एक सा रहता है। दोनों में भीतर से होने वाली प्रतिक्रिया में तनिक अन्तर नहीं होता। इस विषय की चर्चा ऊपर काफी हो चुकी है।

किसकी ऐसी स्थिति होती है?

'जितात्मनः प्रशान्तस्य' – 'जिसने आपे को जीता है और जो प्रशान्त हो गया है'। मन-बुद्धि-इन्द्रियाँ और तन पर जिसका पूरा अधिकार है। जिसकी आज्ञा का पूर्णरूपेण पालन करने वाले हैं यह सभी।

और 'जो पूर्णरूपेण शान्त है'। शम की प्राप्ति से शान्त होता है। मानसिक-विकारों से रहित स्थिति शान्त-स्थिति होती है।

अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहम्।
विमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते॥ 18/53॥

व्यक्ति अहंकार, बल, दर्प, काम, क्रोध, परिग्रह को छोड़ने से ही तो शान्त होता है। यह मन का शम है। इन्द्रियों का दमन होता है। इसी से प्रशान्त होता है। इन विकारों से रहित होने पर ही तो ऊपर वर्णित समता आ सकती है। इन विकारों के होने से ही विषमता होती है।

शम (श्लोक 3, ऊपर) के द्वारा योगारूढ़ को जो स्थिति प्राप्त होती है उसका वर्णन अगले श्लोकों में भी चलता है (7, 8 और 9)।

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः।
युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाष्मकांचनः॥ 8॥

'जिसकी आत्मा ज्ञान तथा विज्ञान से तृप्त हो गई है, जो कूटस्थ है, जिसने इन्द्रियों को जीत लिया है, जिसके लिए मिट्टी का ढेला, पत्थर तथा सोना बराबर है, ऐसा योगी युक्त कहा जाता है'॥ 8॥

योगारूढ़ के उपरान्त शम की साधना से प्राप्त होने वाली अवस्था को 'युक्त' कहा है। युक्त – जुड़ा हुआ, जो ब्रह्म से जुड़ गया है। अठारहवें अध्याय में इसी अवस्था का परिपाक ब्रह्मभाव है। उसी को अन्यत्र ब्राह्मी-स्थिति कहा है। उसे ब्रह्म-निर्वाण भी कहा है। ऊपर के श्लोक में वर्णित लक्षण भी इसी में घटित होते हैं। यहाँ उसी के विषय में और परिचय दिया गया है।

'ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा' – 'जिसकी आत्मा ज्ञान और विज्ञान से तृप्त हो गई है'। ज्ञान, आत्मा विषयक बोध, जो ब्रह्मज्ञान कहा जाता है, वही जिसकी चर्चा गीता के दूसरे अध्याय में हुई थी। विज्ञान – प्रकृति विषयक बोध, 'एक से अनेक कैसे होता है? प्रकृति

कैसे बरतती है'? यह सारा अभिव्यक्ति का खेल किस तरह से चलता है? यह सभी विज्ञान है। जिसने इस प्रकार से अव्यक्त तथा व्यक्त को पहिचान लिया है, और अधिक जानने की लालसा जिसमें नहीं है।

वास्तव में हम ऊँचे स्तरों में बहुत कुछ जानते हैं, परन्तु वह सारा ज्ञान मस्तिष्क में उतरता नहीं। जिसकी जानने की लालसा समाप्त हो गई है, जो छक गया है, बस इतना ही कहने का प्रयोजन है। कितना जानता है, यह कहने का प्रयोजन नहीं है।

'कूटस्थ' खूँटे की तरह स्थिर। खूँटा हिलता नहीं है। लोग उससे बंधते हैं। वह चलायमान नहीं होता। जो उससे बंधता है वह भले ही चलायमान हो। इस प्रकार से खूंटे की तरह वह भीतर स्थिर होता है। ब्रह्म भी तो कूटस्थ है। **'कूटस्थमचलं ध्रुवम्', 'नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः'।** जो आत्मनिष्ठ होता है, जो ब्रह्मनिष्ठ होता है वह वैसा ही हो जाता है। भीतर अचल पर्वत की भाँति, डिगाये डिग नहीं सकता। गुणातीत के लक्षणों में भी तो कहा **'गुणैर्यो न विचाल्यते'** (14, 23) 'गुणों के द्वारा जो चलायमान नहीं किया जाता'। वैसा ही कूटस्थ होता है।

'विजितेन्द्रियः' जिसने इन्द्रियों पर भली प्रकार से विजय प्राप्त की है। जैसे-जैसे कदम आगे बढ़ता है, इन्द्रियों पर भी अधिकार बढ़ता चला जाता है। युक्त अवस्था में तो इन्द्रियों पर पूर्णाधिकार होता है। बिना इस अधिकार के उस अवस्था की कल्पना मूढ़ता है, आत्म-प्रवंचना है, यह न भूल जाना चाहिए। बुद्धिगत ज्ञान सारा ही अज्ञान हो जाता है इन्द्रिय-संयम के अभाव में।

और **'समलोष्टाश्मकांचनः'** मिट्टी का ढेला, पत्थर और सोना जिसके लिये समान हैं। गुणातीत के लक्षण में (14, 24) ठीक यही कहा। क्या वह विवेक रहित हो जाता है जो मिट्टी से पत्थर को नहीं पहिचानता या इन दोनों से सोने के भेद को नहीं जानता? वह पहिचानता है, भेद भी जानता है, परन्तु, उसके लिये जो मूल्य का अन्तर लोग लगाते हैं वह नहीं रहता। जो प्रियत्व है, आकर्षण है सोने में, वह नहीं रहता। वह सभी कुछ की उपयोगिता समझता है, सभी को अपनी-अपनी जगह रखता है परन्तु, लोभ के न होने से बंधता नहीं सोने से। जैसे बच्चे की स्थिति होती है – अच्छे से अच्छे खिलौने को थोड़ी देर खेलखाल कर रख देता है, दूसरा उठा लेता है। वैसी उसकी स्थिति होती है। वह आसक्ति रहित है। लोभ रहित होता है। अतः बन्धन रहित होता है।

ऐसे व्यक्ति को युक्त कहते हैं। युक्त – जुड़ा हुआ। गुणातीत युक्त होता है। वह कर्मनिष्ठा का परम सिद्ध है। परम शान्ति को लाभ किया है ऐसे व्यक्ति ने।

आगामी श्लोक और परिचय देता है युक्त का।

सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु ।
साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते॥9॥

'जो सुहृद्, मित्र, शत्रु, उदासीन, मध्यस्थ, द्वेष्य तथा बन्धु में और सज्जन तथा पापी में (भी) समबुद्धि रखता है वह विशेष है'॥9॥

श्लोक के पूर्वार्ध में पारस्परिक सम्बन्ध की कई कोटियाँ कही हैं। सुहृद् तो परम-मित्र होता है। वहाँ गहरी प्रीति होती है। दिल से दिल मिला होता है। दो शरीर एक आत्मा कहे जाते हैं सुहृद्। मित्र में सच्चाई होती है और हित-चिन्तन होता है। प्रीति भी होती है, परन्तु सुहृद् की सी नहीं। शत्रु तो अहित चाहता है, प्रीति नहीं वैर होता है। उदासीन वह है जो न मित्र है न शत्रु। जिससे कोई वास्ता ही नहीं पड़ा वह तटस्थ है। मध्यस्थ जो मित्र तथा शत्रु के बीच में है। न उसे मित्र कहा जा सकता है न शत्रु, क्योंकि शत्रुता वह करता नहीं, परन्तु हित भी करने में हिचकता है। न शत्रु का साथ ही देता है और न हमारा। उदासीन भी नहीं है। हित वह चाहता है, परन्तु करता नहीं। शत्रुता वह चाहता नहीं, परन्तु उसकी तटस्थता से हानि होती है। या इसके विपरीत

स्थिति में भी मध्यस्थ होता है। दोनों ओर के हित चाहने पर भी भगवान् कृष्ण की तरह मध्यस्थता होती है कौरव-पाण्डवों के बीच में।

द्वेष्य, जो द्वेष के योग्य है। शत्रु जो हमसे शत्रुता करे। द्वेष्य जिसके कर्मों के कारण हमें उससे द्वेष रखना चाहिए सांसारिक दृष्टि से। कुल परम्परा से द्वेष चलते हैं। उसके नाते से भी व्यक्ति द्वेष्य होते हैं।

बन्धु, जो बंधा है रक्त के नाते से, कुल तथा माता-पिता के नाते से, विवाहादि के सम्बन्ध से।

जो व्यक्ति इन सब के प्रति समबुद्धि है वह विशेष है, उसकी अवस्था और भी ऊँची है। जिसकी मति बाह्य सम्बन्धों से अप्रभावित रह सकती है जो व्यक्तित्व के रंगों से अरंजित, व्यक्तित्व से ऊपर रहता है पूरी तरह से, वह ऊँचा है। वह युक्त योगियों में भी विशेष है। वह जो सभी को आत्मा के नाते समरूप से, भीतर से विकार रहित होकर, राग-द्वेष रहित होकर, स्वीकार कर सकता है, वह।

'साधुष्वपि च पापेषु' यह समता साधु तथा पापी के प्रति तक व्याप्त हो जिस व्यक्ति में। नियम है सज्जन से प्रीति और पापी की उपेक्षा। पुण्य को देखकर मुदिता (प्रसन्नता) और पाप को देखकर उपेक्षा – यह पातञ्जलि का भी उपाय है चित्त प्रसाद का। पर यह सामान्य स्थिति है। परन्तु मानुषी-स्तर से अतीत स्थिति है समता। जब पुण्यात्मा तथा पापी में एक ही आत्मा दीख पड़ता है, तो उपेक्षा असम्भव हो जाती है। योग-युक्तात्मा तो-

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः॥6/29॥

'सभी में अपने को और अपने में सभी को देखता है', अतः समदर्शी होता है। पाप तथा पुण्य समा जाते हैं इस आत्म-दर्शन में। वह ही विशेष स्थिति है। गुणातीत के लक्षणों से मिलान करना रुचिकर होगा।

धार्मिक कोप (righteous anger) के लिए सिद्ध सन्त में कोई गुंजाइश नहीं होती। वह कोप तो मनोगत आसक्ति का ही परिणाम हो सकता है। ऐसे सन्त का लोक-व्यवहार कैसा होता है? लोक कल्याणरहित, जैसा भगवान् का होता है। भगवान् भी तो सम हैं सभी के प्रति, फिर भी वह सारा खेल खेलते हैं। किसी को सताते हैं, किसी को हँसाते हैं। कोई पैदा होता है, कोई मरता है। बाह्य व्यवहार से यह समता नहीं पहिचानी जाती। आन्तरिक स्थिति है वह तो।

10 से लेकर 15 तक आगामी छः श्लोक इस परम शान्त अवस्था की प्राप्ति के लिए 'शम' के साधन का वर्णन करते हैं। यह श्लोक 18वें अध्याय के 51वें श्लोक से लेकर 53वें श्लोक के साथ मेल खाते हैं। नैष्कर्म्य-अवस्था को प्राप्त व्यक्ति उस साधना के द्वारा ब्रह्मभाव को लाभ करता है। यहाँ इस साधना के द्वारा योगी युक्त होता है। निर्वाण – परम शान्ति को लाभ करता है। एक ही स्थिति के लिए आदेश है दोनों स्थलों पर।

मन-बुद्धि के संयम का जो मार्ग कहा जा रहा है, जो कर्मयोगी के लिए आवश्यक है, उसी मार्ग के अनुकूल यह साधना है। आरोह पथ की यह साधना है, इसमें अपना प्रयत्न प्रधान है, प्रभुकृपा का मुख्य अवलम्बन नहीं, समर्पण का काम नहीं, शरणागति का सहारा नहीं। यह आत्मसंयम के द्वारा मन को शान्त करके ब्रह्म-स्थित होने का रास्ता है।

पहिले भी कहा जा चुका है, ध्यान के लिए जीवित आचार्य के द्वारा ही मार्ग लेना ठीक रास्ता है। पुस्तक पढ़कर ही चलना जोखिम का काम है।

यह सभी बातें अवरोह पथ पर चलने वालों के लिए नहीं है। उस मार्ग की परिपाटी और नियम आदि सभी अलग हैं। अतः व्यर्थ में उलझना न चाहिए। अवरोह का मार्ग शरणागति की निष्ठा पर आश्रित है। समर्पण में उसकी विश्रान्ति होती है। उसकी आन्तरिक साधना-ध्यानादि उसी रंग में रंगी हुई है। उसके लिए पाठक को लेखक की पुस्तक आध्यात्मिक-साधन के दोनों खण्ड देखने होंगे। यहाँ वर्णित सभी बातें अवरोह पथ के पथिकों के लिए नहीं हैं।

(क्रमशः)

गुरु वाणी

अपने खाने को जितना सादा तथा हल्का कर सकेंगी उतना ही अच्छा होगा। मिर्च, मसाले, प्याज, खटाई, मिठाई, राजसिक होने के कारण मन में विकार पैदा करने में सहायक होते हैं।

पहिले-पहिले कुछ बुरा सा लगेगा परन्तु फिर इसी प्रकार के खाने में मज़ा आने लगेगा। जिह्वा तथा कर्मेन्द्रिय का अटूट सम्बन्ध है।

मानसिक आहार को शुद्ध करना भी बहुत आवश्यक है। यदि हम पुस्तकें ऐसी पढ़ते हैं जिनमें विकार की चर्चा है, पाशविक प्रेम की चर्चा है तो हमारे में वैसे ही संस्कार उद्भूत होंगे और हमें पतन से बचना कठिन होगा। (पत्र 82)

❖ ❖ ❖

हमारा व्यवहार, उठना बैठना तथा बोलना चलना ऐसा होना चाहिए जिससे 'लज्जा' - स्त्री सहज लज्जा-टपके। हमारी वस्त्रभूषा ऐसी सादा हो कि न हमारे मन में तन की प्रधानता जागृत हो और न ही देखने वालों पर ऐसा प्रभाव पड़े। नवीन ऊँचे आदर्शों द्वारा आप अपनी रुचियों को बदल सकती हैं। जो वास्तव में हमारे लिये हितकारी है वह हमें अच्छा लगना ही चाहिए। (पत्र 82)

❖ ❖ ❖

संगति पर ध्यान देना आवश्यक है। जहाँ पर विकार की सम्भावना हो उस रास्ते से अपने को दूर रखना ही बुद्धिमत्ता है। आग में हाथ डालने से जलना स्वाभाविक है, फिसलने वाली भूमि पर रपट जाना भी। (पत्र 82)

❖ ❖ ❖

अन्तिम तथा सबसे महत्वपूर्ण सहायता है राम नाम। कोई सहायक न हो तो यह सहायक है। यह हर समय संगी है। मन में गुँजा दें और तन में गुँजा दें और आड़े समय में इसका स्मरण करें - भगवान से नाममयी प्रार्थना करती हुई उसके चरणों में झुक जायें। भगवान आपकी रक्षा करें। (पत्र 82)

❖ ❖ ❖

जो व्यक्ति विचारों तथा बुद्धि की आसक्तियों को एक दम छोड़ने के लिये तैय्यार रहता है, जिसमें विशाल सहानुभूति होती है, दूसरे को समझने की इच्छा भी होती है, वही दूसरों की बातों को समझ सकता है और उनको प्रभावित कर सकता है और स्वयं प्रभावित हो सकता है। यह लचीलापन आगे बढ़ने के लिये अनिवार्य प्रतीत होता है। इसके साथ ही साथ दृढ़ता की भी आवश्यकता है। इसके अभाव में व्यक्ति बिल्कुल बेकाम का होता है। (पत्र 83)

❖ ❖ ❖

Letters to Seekers

Letter No. 21 : Shri Ram : Chitai, Almora.

28.10.1944

My dear .....,

Yours of the 24th to hand just yesterday. I was much pleased to read the questions which have arisen in your mind on reading my comments.

Your first question is about my personal view about Avtars. I do believe in the possibility and when I look for instances I come upon Rama and Krishna alone in the recorded history. But trouble is that accounts that we do get are history mixed with mythology. One has but to admit the history of the personages, even if one does not admit all that is said about them. It seems that these accounts have been overlaid by symbolism.

As far as the unscientific aspect of their lives goes, somehow I do not feel like putting aside all, in view of the great distance in time. From anthropology we know of very much different races of different statures having lived in very early ages. From spiritual considerations, we also know that there was a time when 'matter' was not so much solidified. Time has caused such great changes in the conditions that all that is said of time appears like a fairy tale than actual fact. Therefore it seems so hard to believe. I wonder if the scientific inventions of today would not have been looked upon as utter impossibilities half a century ago. In fact most of mythology is symbolism and the rest antiquated history.

We can also know about our past lives. Sadhaks sometimes get flashes of their past history. But by systematic training according to the Raja Yoga method it is possible to develop this siddhi. This is possible because of the possibility of human consciousness directly contacting subtle matter which retains past impressions. These are rather subtle things and if you like to study and satisfy your curiosity. I may suggest Leadbeater's pamphlet on "clairvoyance" There is more literature besides.

In fact, He does not take a physical form, he uses a physical form. To work in the material plane, a material instrument is necessary. This is in accordance with his own Laws of Prakriti. Law prevades all the planes and all things happen in accordance with them. Because the law is self imposed law, there is no question of limiting his capacity. Because a just king does not violate his own laws, it does not mean that his capacity is limited. This is in the fitness of things.

In connection with the Avatara philosophy, I would like to tell you one thing more. It is only a ray of ourselves (The Jivatma) that is manifesting itself on the physical, mental and spiritual planes in this personality. We are so to say, all at once living at all these planes and are yet beyond them all. Some times denizens of a higher sphere contact themselves with certain suitable personalities here below and certain strange phenomenon are witnessed. This

is possible because of the afore-mentioned fact. These persons are also Avtaras in a sense of those gods. This is called the theory of corresponding personalities.

Having said all this, I should like to add, such is my view at present about these matters. It is really very difficult to comprehend these things entirely (and state them) while encased in this material brain.

We are also having an Akhand Jap today. I was pleased to learn about your Akhand Jap.

I hope you have the reply to your previous letter by now.

With best wishes,

Yours in the Lord,

Ramanand

❖ ❖ ❖

Letter No. 22 : Shri Ram : Chitai, Almora.

29.10.1944

My dear .....,

I have already sent you two letters, one from Loharkhet on my way back from Pindari Glacier and the other from Digoli, which contain my comments on Gita. Yours of the 13th I received a few days back.

Yes, I mean that you should await on Him to have the fullness of His life in you, to be perfectly one with Him. If that much is secured, all is secured. Why limit your goal by calling it निष्क्रियद्रष्टातत्व Nishkriyadrashtatatva only? Who knows how much greater is the Lord than the highest reaches of our wildest imaginations. Ask for His Grace to fill you through and through. Ask to be wholly His, within and without. That is the direction in which you should aspire. Such an aspiration will burn away all the dross in you and you will be gradually finding yourself nearer and nearer to His feet.

You may take Rama-nama as you can best adjust it to your mental make up. It is Bhava, it is Shakti, it is Grace and much besides. The more of Bhava (deep feeling filled with sincere inspiration) you have, the sooner will experience begin in the inner realm. Now that your obstacle is gone, get ahead with your best vigour.

Yes, I got you sent the two copies of Bhakti Prakash. I forgot to mention it in my previous letter. In the accompanying I am giving a brief account of my visit.

Yours in the Lord,

Ramanand.

❖ ❖ ❖

Letter No. 23 : Shri Ram : Haldwani.

01.11.1944

My dear Sharma Ji,

I am in reply to your letter of the 24th. After all I left Almora on the 29th, was detained at Jeolikot for a couple of days and reached here last evening. It is really a momentous change from the calm clear and cool atmosphere of the hills to the husky plains with motor lorries buzzing past and filling the air with clouds of dust. Of course, the system will soon adapt itself to the new conditions. I am sensing this difference as I never did before.

You have enquired about Shri Swami Satyanand Ji. He is my Gurudev. I owe all that I have to him. It was his kindly grace that made me what I am. He is about eighty at present. He took leading part in the Arya Samaj's work of the Punjab in the last forty years. He wrote the first detailed biography of Swami Dayanand Saraswati, "Shrimad Dayanand Prakash". As far I know there is not another to equal him in the Punjab at present. It was in the twenties of this century that the craving for spiritual experience awoke in him intensly. During the course of his Sadhna, he received Rama-nama in a peculiar way of which I shall tell you when we meet. That worked wonders in him and satisfied his spiritual hunger. Since then he began to lead others on the path. It meant a mighty upheaval in the Arya Samaj. The forces of the Arya Samaj were mobilised most vigorously to throw him out by a resolution in the Pratinidhi Sabha, but the circle of his friends was so great that it was all in vain. Seeing that he was the cause of fractions in the Arya Samaj he himself resigned from the Arya Samaj. He did a lot in the last Hyderabad Satyagraha as well, on the joint request of both the circles of the Arya Samaj in the Punjab. He is interested in the Harijans, in Hindi, in fact in all that presents Hindu Culture. He is an August personality of pleasing manners which win over even his foes. He acquired the knowledge of Sanskrit, and knows English modestly. He is catholic in his views and has not even a tinge of the stinginess of heart and quarrelsomeness of common Aryasamajist.

The word Nirakar निराकार does not denote the absolute. Above the plane of emotion, we are also without the specific form. The Rama of Swamiji though निराधार Niradhar is सच्चिदानन्द Sachidananda, is in fact the Purshottama of the Bhagwatgita and the Nirguna of Kabir. The greatest emphasis is on pure noble serviceful life, devoted in entirety to Him through the fullness of the emotion of Bhakti.

The other word in Hindi alongwith निराधार तत्व, Niradhar Tatva, I have not been able to make out.

You are not making use of the rosary. Though a little tedious in the beginning, you would do well to use it at least for half an hour in the morning, if you do not mind. When

sitting in meditation, bend down low in salutation. Rising fix your attention for a few seconds in the navel and then come up to the Heart centre (कलेजा). Go on with the japam, trying to keep your mind there. Please do not strain. The mere desire to concentrate in the heart should produce a warmth there. After a few seconds, let go; the attention may be allowed to come or even go down as it does, without any effort to restrain.

Do as much of *japam* as possible so that you can make the best of my visit.

Yours in the Lord,

Ramanand

P.S.: Sri Swamiji is also the author of एकादशोपनिषत्संग्रह Ekadeshopnishatosangarha Hindi translation with brief comments at places, श्रीमद्भगवद्गीता (भाषा) Shrimad Bhagwatgita (Bhasha) and बाल्मीकीय रामायणसार Balmikeya Ramayana Saar in poetry.

All these are available from the Secretary Satyanand Publication Trust, Amritdhara Bhawan Lahore, (Punjab).

❖ ❖ ❖

वन्दना

(पुरानी पत्रिका से उद्धृत)

हे स्वयंभू! सृष्टि कर्ता! सृष्टि प्रति पालक प्रभो,
सृष्टि संहारक तुम्हीं हो, सृष्टि संचालक प्रभो।
देव! तुम देवेश हो, परमात्मा, परमेश हो,
अव्यक्त हो, अविकल्प हो, अद्वैत हो, अखिलेश हो।
निर्विकार, निरीह तुम, निर्लिप्त, गुण आगार हो,
सर्वत्र हो, सर्वज्ञ हो, सर्वेश! सर्वाधार हो।
हो तुम्हीं आनन्द-अनुपम, शान्ति-सुख के धाम हो,
रम रहे हो एक कण-कण में तभी श्री राम हो।
क्या करूँ फिर याचना? 'निर्भीक' केवल प्यार हो।
और मेरी भाव मय यह 'वन्दना' स्वीकार हो।

– श्री निर्भीक, रामनगर

भागवत के मोती

गत वर्ष के अप्रैल अंक से पत्रिका में श्रीमद्भागवत के चुने हुए सन्देश छपने आरम्भ हुए हैं। इस अंक में प्रस्तुत है इन सन्देशों की सातवीं कड़ी –

33. प्रिय उद्धव! जगत में जितनी आसक्तियाँ हैं, उन्हें सत्संग नष्ट कर देता है। यही कारण है कि सत्संग जिस प्रकार मुझे वश में कर लेता है, वैसा साधन न योग है, न सांख्य, न धर्मपालन और न स्वाध्याय। तपस्या, त्याग, इष्टापूर्त और दक्षिणा से भी मैं वैसा प्रसन्न नहीं होता। कहाँ तक कहूँ – व्रत, यज्ञ, वेद, तीर्थ और यम नियम भी सत्संग के समान मुझे वश में करने में समर्थ नहीं हैं।

– भागवत 11.12.1-2

34. साधक को चाहिए कि आसन और प्राणवायु पर विजय प्राप्त कर अपनी शक्ति और समय के अनुसार बड़ी सावधानी से धीरे-धीरे मुझमें अपना मन लगाये और इस प्रकार अभ्यास करते समय अपनी असफलता देखकर तनिक भी ऊबे नहीं, बल्कि और भी उत्साह से उसी में जुड़ जाये।

– भागवत 11.13.13

35. भक्त के लक्षण – प्यारे उद्धव! मेरा भक्त कृपा की मूर्ति होता है। वह किसी भी प्राणी से वैर-भाव नहीं रखता और घोर से घोर दुःख भी प्रसन्नतापूर्वक सहता है। उसके जीवन का सार है सत्य और उसके मन में किसी प्रकार की पाप वासना कभी नहीं आती। वह समदर्शी और सबका भला करने वाला होता है।

उसकी बुद्धि कामनाओं से कलुषित नहीं होती। वह संयमी, मधुर स्वभाव और पवित्र होता है। संग्रह-परिग्रह से सर्वथा दूर रहता है। किसी भी वस्तु के लिये वह कोई चेष्टा नहीं करता। परिमित भोजन करता है और शान्त रहता है। उसकी बुद्धि स्थिर होती है। उसे केवल मेरा ही भरोसा होता है और वह आत्मचिन्तन में संलग्न रहता है।

वह प्रमादरहित, गम्भीर स्वभाव और धैर्यवान होता है। भूख-प्यास, शोक-मोह और जन्म-मृत्यु – ये छहों उसके वश में रहते हैं। वह स्वयं तो कभी किसी से किसी प्रकार का सम्मान नहीं चाहता, परन्तु दूसरों का सम्मान करता रहता है। मेरे सम्बन्ध की बातें दूसरों को समझाने में बड़ा निपुण होता है और सभी के साथ मित्रता का व्यवहार करता है। उसके हृदय में करुणा भरी होती है। मेरे तत्व का उसे यथार्थ ज्ञान होता है।

– भागवत 11.11.29-31

साधना परिवार की विभूतियाँ

पूज्य स्वर्गीय श्री सूर्यप्रसाद जी शुक्ल 'रामसरन'

जीवन परिचय एवं कुछ प्रेरणादायक घटनायें

तृतीय भाग

स्वामी रामानन्द जी द्वारा कानपुर में शिविर

आपके आग्रह पर पूज्य स्वामी जी ने कानपुर जिले के तरी दुर्गापुर (शिवराजपुर के पास) व पटकापुर (बिठूर के पास) श्री गंगा जी के किनारे दो शिविर भिन्न-भिन्न समय में किये थे, जिनमें रामनगर तथा अन्य स्थानों के साधकों ने भाग लिया था। बिठूर में शिविर के लिये स्थान खोजते-खोजते जब पटकापुर पहुँचे तो जंगल में एक स्थान पर स्वामी जी ने बैठकर ध्यान किया और कहा कि इस जगह शिविर होना चाहिए, यह बड़ा जागृत स्थान है। चूंकि वहाँ कोई मकान तो था नहीं, अतः रावटी लगाकर शिविर किया गया। जहाँ शिविर किया गया था वहाँ पर खिन्नी का एक बड़ा भारी पेड़ था। कहते हैं वह कभी फला नहीं था, परन्तु शिविर के बाद उसमें खूब फल आये। यह शिविर बड़ा प्रभावशाली था।

स्वामी जी के निर्वाण के बाद

15 अप्रैल 1952 को पूज्य स्वामी जी के निर्वाण के पश्चात् गुरु दीक्षा देने के अधिकार का निर्णय करना था। पूज्य स्वामी सत्यानन्द जी ने यह अधिकार श्री शुक्ल जी को देने की चेष्टा की किन्तु आपने यह ज़िम्मेदारी लेने से इंकार कर दिया, जिसके बाद यह ज़िम्मेदारी पूज्य माँ सुमित्रा सब्बरवाल जी को सौंपी गई। माँ जी ने इस ज़िम्मेदारी का निर्वहन पूरे जीवन भर बड़ी निष्ठा के साथ किया जिसका प्रमाण कनखल में गंगा के किनारे पर स्थित 'साधना धाम' नाम का विशाल भवन है जिसमें वर्ष भर शिविरों का आयोजन किया जाता है। पूज्य माँ जी की पहल व विशेष प्रयासों के फलस्वरूप यह भवन, जिसमें साधना मन्दिर (हॉल), भोजनालय, वाचनालय, औषधालय और कार्यालय आदि को मिलाकर लगभग 61 कमरे हैं, 1961 में बन कर तैयार हो गया था। इस भवन के बनाने में उस समय के कई समर्पित साधकों का योगदान रहा जिसमें श्री शुक्ल जी भी थे। श्री शुक्ल जी पूज्य माँ जी के विशेष कृपापात्र थे। सभी कार्यों में माँ जी आपसे विचार विमर्श किया करती थीं। काफ़ी समय तक माँ जी साधना परिवार की अध्यक्षा व श्री शुक्ल जी उपाध्यक्ष बने रहे। अन्त में श्री शुक्ल जी ने अपनी असमर्थता प्रकट करके उस पद से छुट्टी पा ली थी।

पूज्य स्वामी जी ने अपने समय में ही आपको संचालक बना दिया था, इसलिये उनके बाद में भी धाम में होने वाले शिविर भी आपके संचालन में ही होते रहे। साधना परिवार के सभी साधक भाई बहिन आपका बड़ा सम्मान करते थे तथा आप भी उनको उचित परामर्श व उपदेश दिया करते थे।

हरिद्वार शिविर

श्री शुक्ल जी हर वर्ष अप्रैल व जुलाई शिविर में कानपुर के भाई बहनों को बड़ी संख्या में कानपुर से हरिद्वार ले जाते थे। वहाँ उनको सब प्रकार की सुविधा प्रदान करना, जो खर्च करने में असमर्थ थे उनकी आर्थिक सहायता करना, जो लोग अधिक ठहरना चाहते थे उनको वहाँ अधिक दिनों तक रुकवाना, ऋषिकेश

आदि स्थानों में घूमने व ठहरने आदि की सभी व्यवस्था करवाना – ये सभी सेवा कार्य नि:स्वार्थ भाव से किया करते थे। आपने अपने संरक्षण में 2 शिविर वृन्दावन में और 1 शिविर चंडीगढ़ में किया।

साधना धाम में श्री रामायण जी के अखण्ड पाठ

1971 में साधना धाम में पूज्य माँ जी व आपके आग्रह पर श्री रामायण जी के 101 अखण्ड पाठ कराने का निश्चय हुआ। पाठ प्रात: से सायंकाल तक होते थे। शाम को आरती के बाद पाठ विश्राम दिया जाता था, फिर प्रात: को जहाँ से छोड़ा गया था वहीं से आरम्भ कर दिया जाता था। अन्त तक 166 पाठ विभिन्न साधकों द्वारा कराये गये। आरती, भोग, हवन व भण्डारा आदि के बाद समाप्ति की गई। उस समय धाम के वातावरण में जो आनन्द की वर्षा हुई वह अवर्णनीय है।

पूज्य सुमित्रा माँ के 7 दिसम्बर 1979 को निर्वाण के बाद समिति ने आग्रह पूर्वक आपके लाख मना करने के उपरान्त भी आपको ही नाम देने का अधिकार सौंपा तथा आपकी अनुपस्थिति में श्री उमादत्त जी लड़ोइया को नाम देने का अधिकार दिया गया जो मौजूदा समय में नाम दे रहे थे। माँ जी के निर्वाण के बाद अध्यक्ष पद के लिये भी आप पर जोर डाला गया परन्तु आपने स्वीकार नहीं किया क्योंकि आप कोई पद या नाम नहीं चाहते थे।

कानपुर आ जाने के बाद पहले अपने घर पर सत्संग शुरु किया। बाद में कई बार स्थान बदले गये। चूँकि शहर में साधकों की संख्या अधिक हो गई थी और सबका दूर-दूर से आकर एक जगह पर एकत्रित होना कठिन हो गया था, कई जगह केन्द्र बना कर सत्संग किये जाने लगे। अन्य केन्द्र स्वरूपनगर, पाण्डुनगर, काकादेव, साकेत नगर, नवाबगंज, रामबाग, बैरी (कल्याणपुर) आदि में आज भी सत्संग होता है। शत्रुघ्न पार्क के सत्संग में आप स्वयं उपस्थित रहते थे और अस्वस्थ होने के उपरान्त भी वहाँ पैदल चलकर ही जाते थे। अधिक अस्वस्थ होने पर भी आपने सत्संग में जाना नहीं छोड़ा। लोग मना करते तो कहते कि मेरा तो जीवन ही सत्संग है, मैं सत्संग के बिना रह नहीं सकता।

पहले जब रामबाग में सत्संग होता था तो उसमें आपके सामने वाले मकान से श्रीमती हर्ष कुमारी शर्मा नामक एक महिला भी आती थीं (जिनका ज़िक्र ऊपर आ चुका है), उनको सत्संग व सन्त महात्माओं के प्रति बड़ी श्रद्धा थी। श्री शुक्ल जी के घर महात्माओं का आगमन होता रहता था। एक दिन एक पहुँचे हुए महात्मा स्वामी शंकरानन्द जी आपके घर पधारे। सत्संग में सभी लोग उपस्थित थे। महात्मा जी ने श्रीमती हर्ष कुमारी की ओर देखकर आपसे कहा कि यह तेरी पूर्व जन्म की माँ है जो तुझे अब मिली है। इतना सुनते ही इनमें मातृ भावना जागृत हो गई और अन्त समय तक माँ की तरह आदर सम्मान करते रहे। श्रीमती हर्ष कुमारी को भी पुत्र प्रेम प्रकट हो गया क्योंकि वर्षों पूर्व वह अपना बेटा खो चुकी थीं जिसके कारण वह बहुत दुखी रहा करती थीं। अब पुन: पुत्र प्राप्त करके वह बहुत ही प्रसन्न हुईं। माँ बेटे का नाता पाकर दोनों सुखी हो गये थे।

कानपुर का साधक परिवार व उसकी व्यवस्था

कानपुर के साधकों की बढ़ती संख्या को देखते हुए उनकी देखभाल व भविष्य में साधना व्यवहार की प्रगति के उद्देश्य से अपने साधकों से ही एक समिति का निर्माण किया गया। समिति की अध्यक्षता श्रीमती हर्ष कुमारी शर्मा तथा सचिव पद का भार श्री मथुरा प्रसाद जी को सौंपा गया, शेष 15 सदस्य समिति की कार्यकारिणी में रखे गये। आपने स्वयं को बिलकुल अलग रखा। आपकी साधन अवस्था इतनी उच्च कोटि पर पहुँच गई थी कि दूसरे साधकों को देखकर उनकी साधना की अवस्था को पहचान लेते थे तथा आगाह

कर देते थे कि कौन-सी प्रतिकूलता आने वाली है जिससे सावधान रहने की आवश्यकता है। श्री शुक्ल जी का राम नाम अनवरत चलता रहता था। साधकों की प्रगति पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देते थे; किसी-किसी को अलग सिटिंग भी देते थे। कोई साधक सत्संग या अखण्ड जाप में नहीं आता था तो उसे बुलवाते थे।

नाम देने की व्यवस्था

कुछ साधक ऐसे थे जो सत्संग में तो आते थे परन्तु दीक्षा नहीं ले पाये थे और हरिद्वार जाने में भी सक्षम नहीं थे। ऐसी दशा में सबसे विचार विमर्श करके श्रीमती डॉ. पद्मा शुक्ल जी को नाम देने का अधिकार दिलवाया जो अभी भी सुपात्र साधकों को नाम देती हैं। डॉ. पद्मा शुक्ल जी बहुत ही योग्य और शान्त व सरल स्वभाव की साधिका हैं।

प्रीति भोज

साधकों में आपस में प्रेम बढ़ाने हेतु वर्ष में एक बार प्रीति भोज का आयोजन किया गया जिसका खर्च समिति के सदस्य मिलकर वहन करते हैं। इस भोज में सभी साधक भाई बहन तथा सत्संगी भाग लेते हैं।

दरिद्र नारायण की सेवा

दीन दुखियों की सेवा कैसे हो, इसके लिये सभी साधकों को कहा गया कि सब अपने पास पैसे रखा करें और नित्य किसी दीन दुखिया को अपनी सामर्थ्य के अनुसार पैसे से सहायता किया करें। वर्ष में एक बार अन्धे, लंगड़े, अपाहिज, अनाथ, कोढ़ी और बहुत ही गरीब लोगों को भोजन कराने की व्यवस्था की गई। इसमें सभी साधकगण अपनी इच्छानुसार सहयोग करते थे। आवश्यकतानुसार कपड़े भी दिये जाते थे। जहाँ पीने के पानी की कमी थी वहाँ हैण्ड पम्प लगवाये गये।

पूज्य स्वामी जी के साहित्य के प्रचार के लिये श्री प्यारेलाल भारतीय जी को उत्तरदायित्व सौंपा गया जो अपने पास साहित्य रखते थे और वितरण करते थे।

उदारता

आप इतने उदार थे कि एक बार सर्दी के मौसम में रास्ते में जाते हुए एक ऐसा व्यक्ति मिला जो केवल एक धोती ओढ़े हुए था और सर्दी के मारे थर-थर काँप रहा था। आपने तुरन्त अपने कपड़ों के नीचे पहना हुआ नया स्वेटर उसको दे दिया। आपके जीवन में ऐसे अनेक उदाहरण हैं। आपका कहना था कि नर ही नारायण है।

जन्मभूमि रामनगर के प्रति प्रेम

आपको अपनी जन्मभूमि से बहुत ही प्रेम था। गाँव के अपने सहयोगियों की सहायता से पीलीभीत में रहते हुए भी सेवा कार्य करते रहते थे। गाँव में लड़कों का स्कूल तो चालू हो गया था, परन्तु कन्याओं का स्कूल नहीं था, आपने उसको प्रारम्भ कराया। इमारत की आवश्यकता थी तो ज़मीन खरीद कर उसमें भवन बनवाया। इसके अतिरिक्त गाँव के पंचायत घर में सहयोग देना, गरीब व हरिजनों के कुओं को बनवाना, अन्य कुओं की मरम्मत करवाना, असहाय कन्याओं का विवाह तथा गरीब छात्रों की पढ़ाई में सहयोग आदि जितने भी सार्वजनिक सेवा के कार्य होते थे उन सभी में आपका विशेष योगदान होता था। आपने अपने प्रभाव से तमाम परिवारों के पति-पत्नी, भाई-भाई, सास-बहू व अन्य लोगों के आपसी कलह और वैर भाव को शान्त कराया तथा जिन घरों में मांस-मदिरा आदि का बाहुल्य था उन घरों में सभी लोग भगवान् के भक्त हो गये थे, घर पवित्र हो गये थे। यह सब कार्य ज़ोर ज़बरदस्ती से नहीं, बल्कि प्रेम से किया।

अन्तिम समय

अपनी धर्मपत्नी की मृत्यु के पश्चात् आप अस्वस्थ

रहने लगे थे। देहावसान के समय आप अस्पताल में थे। होली के दिन दिनांक 6 मार्च 1985 को सुबह 6:00 बजे लेटे-लेटे ही आँखें बन्द करके हाथ जोड़कर धीरे-धीरे भगवान् की स्तुति की, रामायण की कुछ चौपाइयाँ कहीं तथा आवाहन किया, पुत्र मुरारी कान्त को आशीर्वाद दिया और ध्यानस्थ हो गये और उसी अवस्था में देह को त्याग दिया।

आपका पार्थिव शरीर तो चला गया परन्तु सूक्ष्म शरीर से आप अब भी सबको सचेत करते और मार्गदर्शन करते रहते हैं।

इस प्रकार पूज्य सूर्यप्रसाद जी शुक्ल 'रामसरन' ने अपने आचरण व रचनाओं के माध्यम से साधना परिवार में अविस्मरणीय स्थान बना लिया। वह सभी साधक भाई बहनों के लिये सदैव प्रेरणा का स्रोत बने रहेंगे।

ऐसे महापुरुष के चरणों में कोटि-कोटि प्रणाम!

❖ ❖ ❖

एक प्रभु का सहारा

जीवन की सभी गतियों को प्रभु की देन मानकर स्वीकार करना ही शान्ति का रास्ता है। यह सभी उस मंगलमय प्रभु का मंगलमय विधान है। हम सभी उसे समझ नहीं पाते हैं कि किस प्रकार से मंगल छिपा रहता है, परन्तु वास्तव में विधान मंगलमय ही होता है। इसी में तो प्रभु की प्रभुता है। केवल मात्र भगवान् को ही जीवन का लक्ष्य बनायें। उसी के लिये जीना और उसी के लिये मरना – यही अनन्यता का मार्ग है, इसी में जीवन का साफ़ल्य है। सभी नातों को भगवान् के नाते से स्वीकार करें। सभी ज़िम्मेदारियाँ अन्त में भगवान् की ही होती हैं। सभी ममता जाकर प्रभु में ही समाप्त हो जाती है। सभी उसके हैं और हम भी। सभी में भाग्य का विधाता वही 'देवाधिदेव' हैं।

हरि नाम से ही दु:ख का सागर तरा जा सकता है। यही राम नाम की निधि हमारी सर्वोत्तम निधि है। यही राम नाम हमारा एकमात्र अवलम्बन है, यही हमारी साधना का सर्वस्व है। नाम से ही अन्तरात्मा जागृत होकर परम शान्ति को प्राप्त करती है। अत: राम नाम ही एकमात्र हमारे साधन पथ का सम्बल है।

हमारे साधन पथ में काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि मनोवृत्तियों का परिशोधन स्वयं हो जाता है। साधक को केवल महाशक्ति पर निर्भर रहना चाहिए। धीरे-धीरे इन सब का शोधन अवश्य होगा। प्रेम करने की योग्यता व्यक्ति के अध्यात्म विकास का माप है। प्रेम ऊँचे उठना और ऊँचे उठाने का साधन है। दूसरे के दोषों को दूर करने का, दूसरों में आत्मविश्वास उत्पन्न करने का, दूसरों को विकास पथ पर आगे बढ़ाने का प्रेम से बढ़कर दूसरा उपाय नहीं है। प्रभु के आगे सिर झुकाना, पूर्ण समर्पण कर देना, उसका हो जाने का, प्रेम ही रास्ता है। भावना में भाव न हो तो भावना बेकार है, भावना में भाव हो तो भव से बेड़ा पार है। स्वार्थ के कार्य करेंगे तो बन्धन, परमार्थ के कार्य करेंगे तो मुक्त हो जायेंगे।

– रमना सेखड़ी

श्री गुरुदेव सत्संग-सुधा

(पुरानी पत्रिका से उद्धृत)

हमारे महाराज बताते हैं कि श्रद्धा का बल सत्य होता है अनन्यता के प्रभाव से। आत्मा की शक्ति जितनी भी धाराओं में बह जायेगी उतनी ही वह पतली पड़ जायेगी। अत: श्रद्धा को सब ओर से समेट कर मातृ चरणों में प्रेरित करना होगा। जो अनेक देवी देवताओं की उपासना करता है, जो संसार के व्यक्तियों और भोगों को माँ के बराबर समझता है वह इस अनन्यता से कोसों दूर है।

अन्तर योग के रहस्य का विवेचन जितने सुन्दर और रोचक ढंग से उन्होंने किया है ''अध्यात्म साधन'' नामक पुस्तक में शायद ही किसी ने ऐसा किया होगा। सुन्दर भाव सुन्दर शब्दों में अति सुन्दरता से पिरोये हुए हैं। पढ़ते-पढ़ते मनुष्य कुछ क्षण के लिये एक दम उस अन्त:स्तल की नीरव गुफा में प्रवेश पा जाता है और शान्ति का अनुभव करने लगता है।

जीवन में अनेक क्षण ऐसे आते हैं, जिनमें मनुष्य परेशान हो जाता है, अधीर हो उठता है, भागना चाहता है संसार के दु:खों से। उसके लिये महाराज लिखते हैं – **स्वीकार करो सभी कुछ उसी से, उसी के आगे उड़ेल दो सब कुछ, सभी थाहों को प्रभु चरणों में रख दो, फिर चैन होगी।** इसी प्रकार उनकी विचार धारा भी अपने ही ढंग की है जो कि पुरानी मर्यादित विचार धाराओं से मेल नहीं खाती। उसकी नवीनता में भी इतना आकर्षण है कि कट्टर विचारों के मनुष्य का भी सिर झुक जाता है। उसकी सच्चाई के आगे।

प्राचीन विचार धारा के अनुसार कामिनी, कांचन बांधते हैं इनसे दूर भागो, लेकिन स्वामी जी की विचार धारा के अनुसार काम और ऐश्वर्य बांधते है, इनसे दूर भागने से बन्धन होता है, इनको प्रभु से स्वीकार करो, ऐसा करने से कामिनी काम के संस्कार को दग्ध करने वाली माँ महाशक्ति का रूप बन जायेगी, कञ्चन को प्रभु से स्वीकार करने से लोभ को क्षीण करने का यह साधन बन जायेगा, प्रभु की सेवा का साधन बन जायेगा।

इसी प्रकार पुरानी विचार धारा के अनुसार सांसारिक व्यापार करना प्रवृत्ति है और गृह त्याग, काम काज का संवर्ण निवृत्ति है, पर महाराज के अनुसार जब तक भीतर ऊँची चेतना जाग्रत नहीं होती तब तक नव संस्कार का निर्माण होता है, तब तक निवृत्ति नहीं, प्रवृत्ति है, भले ही कोई संन्यासी क्यों न हो जाये। जब भीतर ऊँची चेतना जाग्रत हो जाती है, शक्ति का अवतरण होने लगता है, बुद्धि में वह उतरने लगता है, तब नये संस्कारों का निर्माण नहीं होता। भोग के द्वारा पुरातन संस्कार क्षीण होते हैं, तब प्रवृत्ति गृहस्थ में भी प्रवृत्ति नहीं होती।

यह विचारधारा कहती है – जहाँ डर है वहाँ से भागो। यह कहते हैं, डर को निर्मूल कर दो, उस संस्कार को क्षीण कर दो। ऊँची चेतना की जागृति से उस विचारधारा में त्याग किसका? उसे तो सब कुछ स्वीकार करना है उस माँ से, जो कोई उसके रास्ते में जाता है, माँ उसे सभी कुछ के ऊपर कर देती है। वह बन्धन से भागता नहीं, इसीलिये बन्धन से आवाध्य हो जाता है। ऐसे साधु का परिवार गृहस्थियों से बड़ा होता है।

इस रास्ते का साधु गेरुवा वस्त्र पहिनने से साधु नहीं होता, भीतर उसके रंग में रंगा जाकर उसका होकर, प्रेम तथा सेवा की भट्टी में जलकर बनता है। उस विचार धारा के अनुसार साधु बाह्य तप, त्याग, वैराग्य तथा संयम की मूर्ति होना चाहिए। किन्तु यहाँ उसका जीवन मोक्ष के लिये न होकर प्रभु के लिये हो जाये। स्वभाव होना चाहिए, प्रभु के हाथों

में वह यन्त्र हो जाये, पीड़ितों के लिये वह मरहम हो जाये, दुखियों के आँसू पोंछने वाला वह सभी का सगा हो, सभी का पुत्र हो, सभी का सेवक हो, सभी में प्रभु की उपासना कर सके ।

इसी प्रकार मन को वश में करने के लिये, जहाँ पुरानी मर्यादाओं के अनुसार संयम, तप, आदि का आश्रय लिया जाता है, स्वामी जी के विचारों के अनुसार अपना प्रयत्न मन को काबू करने में मत लगाइये। यदि कोई सोचे कि मन को वश में करने से ही प्रभु पथ पर चला जायेगा तो कभी भगवान् का रास्ता न मिल सकेगा, मन से लड़ाई लड़ना गलत तरीका है ।

एकाग्रता स्वयमेव आ जाती है साधना करने से ।

इसी प्रकार वह अपनी पुस्तक 'जीवन रहस्य' में लिखते हैं कि काम की शक्ति तिरस्कार के योग्य नहीं, इससे डरने की जरूरत नहीं, इसका तिरस्कार अपना तिरस्कार है, इससे डरना अपने लिये गड्ढा खोदना है, यह प्रभु की रचनात्मक शक्ति है, विकास के क्रम में इसका होना स्वभाविक है। इसका शोधन होना चाहिए ऊँची चेतना की जागृति से और इसका पूर्ण रूपेण रूपान्तर हो जाना चाहिए ।

उनकी शैली विकास की शैली है। यद्यपि यह शैली परम्परागत प्राचीनता को लिये हुए चलती है, पर वह अपने में एक सम्पूर्ण THEORY है। मिट्टी से पत्थर, पत्थर से वनस्पति और वनस्पति से पशु पक्षी और फिर मानवता, इस प्रकार क्रम से चेतना विकास को प्राप्त दुर्बलताओं एवं विकारों को दिव्य गुणों में परिवर्तित करती हुई चलती है और इस प्रकार मानुषी से अति मानुषी कोटि अर्थात दिव्यता को प्राप्त करती है। यह उनका विकासवाद है जो उनके सिद्धान्तों के अनुसार स्वयमेव होता चला जाता है ।

दु:ख, सुख, पाप, पुण्य, शुभ, अशुभ, जन्म, मरण, सबका उनके विकास में स्थान है वह किसी दु:ख से घबराते नहीं, सुख में आसक्त नहीं होते, पाप से डरते नहीं, पुण्य में लिप्त नहीं होते, शुभ से प्यार नहीं, अशुभ से भागते नहीं, जन्म को वह मृत्यु के मन्दिर तक ले जाने वाली सड़क कहते हैं और मृत्यु को भावी विकास का कारण। इनकी पुस्तक 'अध्यात्म विकास' इन तथ्यों का अति सुन्दर विवेचन करती है। एक बार सत्य का सुन्दर दर्शन होता है इनके उपदेशों में, परन्तु यह सब उस विकास-कारिणी महाशक्ति माँ के ही सम्पर्क में आने से अनुभव में आता है।

यहाँ हम गुरुदेव के वाक्यों को दोहराते हैं – यह जीव तो प्रकृति में यज्ञ के द्वारा छिपा हुआ पुरुषोत्तम ही है। जीव विकास के पथ का पथिक है, उसे पुरुषोत्तम भाव को प्रकृति में पूर्णरूपेण अभिव्यक्त करना है।

जिस हृदय में सेवा का स्रोत बह रहा हो स्वाधीन सेवा का, उसमें वासनाओं के लिये कहाँ स्थान?

सभी कुछ प्रभु पर छोड़ना होगा, उसकी बाहें बड़ी लम्बी है। जहाँ आदमी का दिमाग नहीं जाता वहाँ वह पहुँच जाती है।

जो साकार है वही निराकार है, और जो निराकार है वही साकार है। सत्ता तो एक ही है, निराकार को साकार में सीमित हम कैसे समझ सकते हैं। वह तो उससे बहुत परे भी है और वही तो मुरली मनोहर भी है। अपना नाता तो उससे जोड़ना है जो सभी साकारों का स्रोत है, सभी शक्ति का आदि है। प्रेम का आदि है वही जो अनन्त है। नाता जोड़े किसी भी आधार को लेकर किसी भी रूप अथवा गुण अथवा नाम के आधार को लेकर। तुलसीदास जी तो राम को सीमित ही न समझते थे, वह तो बार-बार भगवान् की भगवत्ता का स्मरण करते हैं – **जग पेखन तुम देखन हारे** – वही अनन्त इस रूप में प्रकट हुआ है। वही नाना वेषों को धारण करता है।

प्रभु के आगे माथा झुकाना है, झुकाओ फिर जैसे वह ले चले उसी रास्ते पर खुशी से चलो। जो अनुभव वह कराये वह स्वीकार करो, वह दर्द देगा तो सहने की ताकत भी देगा। वह साथी बना साथ रहेगा। वह प्यार से भर देगा पर ठीक समय पर, वह देने में कंजूस नहीं, पर वह पगला नहीं। दूसरे का हित, उसका विकास ही सबसे बड़ी बात उसके सामने रहती है। उसकी लीला विचित्र है, वह खूब खेलता है, कभी रास्ता खोलता है और कभी बन्द करता है। वह सभी रास्तों से व्यक्ति को जाग्रत करता हुआ ले जाता है।

दु:ख क्या है? पापों का फल तो है, पर इतना ही नहीं वह हमारे विकास की मांग भी है।

जितनी बड़ी समस्या है, उतना ही मानो हमें ऊपर उठाने के लिये चुनौती है, उतना ही बड़ा आगे बढ़ने का अवसर हमारे सामने आ उपस्थित हुआ है। जीवन की विभिन्नता में, पारस्परिक संघर्ष में और अन्तर्द्वन्द्व में भी कोई महान प्रयोजन छिपा है।

यह संसार उस मंगलमय योगेश्वर की शिव स्थली है। इससे घृणा करना पाप है। मृत्यु इसमें विराम का चिन्ह है, जो नूतन प्रवेश का, नवीन जीवन का आवाहन मात्र है। इस संसार का जो मंगलमय प्रयोजन है, उसे पहिचानना चाहिए। अशुभ से उदित होते हुए शुभ को पहिचानना और उससे प्रोत्साहित होना – यह तरीका है आगे चलने और चलाने का।

वास्तव में संसार दु:ख रूप नहीं है, हमारी वर्तमान स्थिति ने ही इसे हमारे लिये दु:ख रूप बना दिया है। हम एक विशेष प्रकार से प्रतिक्रिया करते हैं संसार के प्रति और उसका फल होता है दु:ख। वही संसार साधक के लिये आनन्दमय होता है और उसका दृष्टि बिन्दु बतलाता है कि पूर्णत्व को प्राप्त व्यक्ति तो इसी संसार को सच्चिदानन्द मय देखता है। प्रत्येक क्रिया में, प्रत्येक विकार और प्रत्येक अणु में उसे तो वही अनुभव में आता है।

दु:ख आन्तरिक प्रतीति है – भीतर से होने वाली प्रतिक्रिया है। व्यक्ति के साथ यह बदलती रहती है। तमस से रजोगुण में प्रवेश दु:ख की प्रखर किरणों के पड़ने ही से होता है और फिर रजोगुण से यही दु:ख व्यक्ति को सत्व की ओर प्रेरित करता है। आत्म-विश्वासी विफलताओं को ही सीढ़ियाँ बनाकर चलता चला जायेगा, विफलतायें पथ-प्रदर्शक होंगी।

धनात्मक उद्देश्य को लेकर चलना ही श्रेयस्कर है। भगवान् से पूर्ण ऐक्य प्राप्त करना और सच्चिदानन्द की पूर्ण अभिव्यक्ति, दिव्य चेतन का अपने में पूर्णरूपेण अवतरण मंगलमय उद्देश्य है। मोक्ष एक ऋणात्मक आदर्श है जो व्यक्ति को संकीर्ण बनाता है। निराकरण के द्वारा तो इस लोक और परलोक के बीच में अनन्त खाई खुदी दीखने लगती हैं और इस लोक की अवहेलना कर हम परलोक में प्रासाद निर्माण करने के इच्छुक हो जाते हैं। क्रियाहीनता की ओर प्रवृत्ति उस आदर्श वालों के लिये स्वभाविक ही है।

यहाँ सांसारिक क्रियाकलाप भी आध्यात्मिक साधन है – अनिवार्य आध्यात्मिक साधन है। इसके बिना साधन की निष्पत्ति नहीं हो सकती, साधन सारे जीवन में व्याप्त होने वाली वस्तु है। जब तक व्यक्ति केवलमात्र प्रात: सायं किये हुए को ही पूजा पाठ मानता है, और दिन में किये गये को आध्यात्मिक साधन नहीं समझता उसका दृष्टिकोण संकीर्ण है और मनोवृत्ति समुचित नहीं। बिना क्रिया किये क्रिया में पूर्णत्व कैसे प्राप्त हो सकता है? साधन की प्रत्येक अनुभूति, हर-एक प्रतीति उसे आगे ले जाने वाली होती है। प्यार कर सकना एक सौभाग्य है। सेवा कर सकना प्यार से – यह इससे भी बड़ा सौभाग्य है।

प्रभु मिलन के लिये तो तन भी शुद्ध रहना चाहिए और मन भी तो क्यों गन्दा करूँ विष (नशे) के सेवन द्वारा अपने देव मन्दिर को।

ऐसे अनेक सुन्दर-सुन्दर उपदेशों से उनका साहित्य भरा पड़ा है उनके मुख का प्रत्येक शब्द ही उपदेश

के रूप में निकलता था। उनका लगाया हुआ उपवन ''साधना परिवार'' पूरी तरह से पनपने भी न पाया था कि वह प्यारा माली चलता बना। लेकिन अब भी उनकी सूक्ष्म देखरेख में उनका उपवन फल-फूल रहा है, निराश जनता को यहाँ सच्ची शान्ति मिलती है। स्वामी जी ने अपने छोटे जीवनकाल में अनेक ग्रन्थों की रचना की – हिन्दी में और इंगलिश में भी। इनकी सूची पत्रिका के प्रत्येक अंक में दी जाती है:-

साधना सत्संग – महाराज अपने जीवनकाल में, एकान्त स्थान पर शहरों से दूर एक 'सत्संग' साधना शिविर लगाया करते थे – पाँच या छः दिन के लिये, जिसमें अखण्ड जाप, भजन, कीर्तन उपदेश आदि समय पर होते थे और अब भी होते हैं और 'साधना शिविर' नामक पुस्तिका में शिविर नियम, अनुशासन तथा शिविर के लिये आवश्यक सामग्री आदि के विषय में परिचय दिया गया है।

ये शिविर अब भी समयानुसार हरिद्वार, दिगोली, कानपुर, बीसलपुर, अहमदाबाद, मेरठ, जालन्धर, झाँसी आदि स्थानों पर इनकी सूक्ष्म अध्यक्षता में होते हैं जो कि अत्यन्त लाभप्रद हैं।

– श्रीमती सन्तोष नागिया, दिल्ली

❖ ❖ ❖

जो चाहता दीन बन्धु को तो दीनों को बना अपना

(पुरानी पत्रिका से उद्धृत)

परम शक्तिमयी माँ का यह संसार विचित्र है। जीवन को पग-पग पर उसकी अलौकिकता के स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं, ऐसे प्रमाण जिनको समझना साधारण मानव बुद्धि से परे की बात है। जल चर, थल चर, नभ चर – नाना प्रकार के प्राणियों का सृजन, जड़ चेतन का प्रसार तथा प्राकृतिक शक्तियों का अभ्युत्थान उसकी शक्ति की अनन्यता का परिचय दे रहे हैं; तथा इनमें भी सर्वश्रेष्ठ मानव को अस्तित्व देकर भगवान् की सृजन शक्ति मानो पूर्ण हो गई है ।

यह मानव देह बड़े भाग्य से मिलती है। जन्म-जन्म की साधना तथा उत्तम कर्मों का जब एक साथ संयोग होता है तो नारकीय योनियों से सर्वोपरि मानव का जन्म होता है। यह शरीर कोई उद्देश्य लेकर संसार में अवतरित होता है और कभी-कभी बुद्ध, गुरु नानक, गाँधी और पूज्य रामानन्द जैसी विभूतियाँ बनकर अपने को सफलीभूत करता हुआ जन-जन के कल्याण का कारण बनता है। इस जीवन को सफल बनाने के अनेकों मार्ग महान पुरुषों ने प्रदर्शित किये हैं, जिनके कई में तो अत्यन्त कठिन साधना योगाभ्यासार्थ - संसार से उपराम होने तथा सांसारिकता से दूर भाग जाने की ओर संकेत है। परन्तु इसके साथ ही जिस मार्ग की ओर जाने के लिये सामूहिक रूप से सभी महान आत्माओं एवं हमारे अध्यात्म साहित्य ने बार-बार उपदेश एवं आदेश दिया है, यह मार्ग है – दीन मानव की सेवा का कार्य, जो कालान्तर में ऐसे स्थान पर पहुँचा देता है जहाँ अहं का सर्वथा लोप होकर वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना जाग्रत हो उठती है। जो सर्वजन के कल्याण का मार्ग है। परन्तु प्रश्न उठता है कि दीन कौन है?

प्रायः धन के अभाव से पीड़ित को ही हम दीन कह देते हैं। यह सर्वथा गलत है। दीन से तात्पर्य उस व्यक्ति से है जो किसी भी वस्तु के अभाव से पीड़ित है, असमर्थ है, असहाय है और सब प्रकार से अपनी शक्ति को खोकर दूसरे के आश्रय की

अपेक्षा रखता है। जो साधनहीन हो चुका है, जिसको आत्मविश्वास नहीं रहा, जो मानसिक रूप से परम धनी है परन्तु अज्ञानता के गर्त में गिरा है। परम निर्धन है और अर्थाभाव से दु:खी है – शारीरिक तौर पर दु:खी है, रोगी है – उसकी सेवा करने वाला कोई नहीं। उसके मुँह में दो घूँट पानी डाल कर शान्ति देने वाला कोई नहीं – जिसके जीवन में नैय्या को सहानुभूतिपूर्ण दो शब्द पार उतार सकते हैं। किसी का सम्बन्ध जिसे नव जीवन – चेतना तथा नवीन मार्ग दिखा सकता है। ऐसे दीन-हीन जन को कौन अपनाये। जो ऐसे संकट में उन्हें उबार लेता है, क्या ऐसा मानव उनके लिये साक्षात भगवान् नहीं है? हमारा वाङ्मय बताता है कि मनुष्य कैसे देवता बनते हैं? साक्षात् भगवान् राम तथा कृष्ण जी का जीवन मानव लीलाओं से भरपूर क्यों दिखाया गया है? उसका तात्पर्य है – साधारण राम की तरह का मानव भी उच्च कोटि के काम करके, दु:खी जनों को उबार कर देवत्व प्राप्त कर सकता है, अवतार कहला सकता है।

आज हमारे समाज में ऐसे दीन-हीन जनों की कमी नहीं। अनेकों ऐसे मिलेंगे जिनका सहारा दूर हो चुका है, जो मार्ग से भटक चुके हैं, जो अपने अमूल्य जीवन से निराश हो चुके हैं, जिनके छोटे बच्चे अपनी भूख की ज्वाला से छटपटा रहे हैं। कहना न होगा कि आज समाज में इस प्रकार का अभाव जनित वर्ग पुकार-पुकार कर यथा-सम्पन्न व्यक्तियों से सहायता की याचना कर रहा है। उनकी कातर दृष्टि आज हम मानवों की ओर लगी हुई है, जो उन्हें अभाव के गर्त से निकाल कर सन्मार्ग पर ले जाये। ऐसे दीन जनों की सहायता करना दीनबन्धु भगवान् की आराधना से भी बढ़ कर बड़ा काम है।

भगवान् स्वयं दीनबन्धु हैं। उनका निवास बड़े महलों में, सम्पन्न, स्वच्छ एवं सब प्रकार से पूर्ण लोगों में नहीं। वे अपने दीन जनों की झोपड़ियों में निवास करते हैं। अत: भगवान् को पाना है तो मन्दिरों में चक्कर लगाने की अपेक्षा दुखियों के द्वार पर जाओ। उनकी सेवा करो। वहीं भगवान् मिलेंगे।

सुहृदय सर्व भूतानाम् – भगवान् सबके सुहृदय हैं। भगवान् केवल भक्तों के ही नहीं, दीनों के भी हैं। दीनों पर भगवान् की विशेष कृपा है। हम भी क्यों न उनके सेवक बनकर उस कृपा के भागीदार बन जायें।

कल्याण तो सब का भगवान् के मंगलमय विधान से ही होगा। हमें तो केवल उसका निमित्त मात्र बनना है। रोगी की सेवा करने, भूले को मार्ग दिखाने, डूबते को तारने, रोते के आँसू पोंछने तथा असहाय की दर्द भरी गाथा सुनने तथा उसे यथोचित आश्वासन देने से जो आत्मिक शान्ति तथा आनन्द प्राप्त होता है उसकी तुलना केवल ब्रह्मानन्द से ही की जा सकती है। हमारे पूज्य स्वामी जी स्वयं दीन जनों के एक बड़े सम्बल हैं। हजारों दीन-हीनों को उबार कर नव जीवन देने वाले गुरु के महान कार्य सदा अमर रहेंगे।

सारांश यह है कि अपनी आत्मिक शान्ति एवं भगवान् की प्राप्ति के अन्य साधनों में सबसे सरल एवं सुगम मार्ग दीनों की सेवा ही है। क्यों न इसी को अपनाकर अपने जीवन को सार्थक बनाया जाये। इससे बड़ी शायद और कोई भक्ति नहीं। ऐसे व्यक्ति के जीवन से माँ वसुन्धरा भी धन्य हो उठती हैं जैसे कविवर मैथिलीशरण गुप्त ने भी कहा है:–

वास उसी में है विभुवर का,
है बस सच्चा साधु वही।
जिसने दुखियों को अपनाया,
बढ़कर उनकी बांह गही।।
आत्म स्थिति जानी उसने ही,
परहित जिसने व्यथा सही।
दीनों हित जिनका वैभव है,
है उनसे यह धन्य मही।।

– सुश्री शकुन्तला ऋषि, मेरठ

जन जन के त्राता श्री गुरुदेव

(पुरानी पत्रिका से उद्धृत)

परम पूज्य स्वामी रामानन्द जी उन महान विभूतियों में से थे जो जन-जन के कल्याण एवं देश व जाति के उद्धार के लिये समय-समय पर माँ भारती के आंचल में अवतरित होती रहीं हैं और जिनके महान कार्यों से माँ सदा गौरवान्वित होती रही है। ऐसी विभूतियाँ मानव समाज के कल्याण के लिये अपना अमूल्य जीवन उत्सर्ग कर सदा के लिये अमरत्व को प्राप्त हो जाती हैं। पूज्य स्वामी रामानन्द जी ने जो आध्यात्मिक निधि हमें दी है उसके लिये न केवल साधना परिवार (वर्तमान समाज) ही वरन् आने वाली पीढ़ियाँ भी सदा आभारी रहेंगी। ज्ञान का वह अभूतपूर्व अक्षय भण्डार भूले-भटके अज्ञानी जनों के पथ-प्रदर्शन हेतु अहर्निश खुला हुआ है। यह उनकी असीम उदारता का ही परिचय देता है।

पूज्य स्वामी जी की अध्यात्म सम्बन्धी श्रेष्ठता एवं उच्चता का बखान करना मानो दिवाकर को दीप दिखाना है। जितनी अल्पावधि तक उनके पावन दर्शनों एवं आशीर्वाद का सौभाग्य मिल सका उतने समय में इतनी महानात्मा को कैसे समझा जा सकता था, क्योंकि बुद्धि तत्व से तो सब बातें कुछ विचित्र सी प्रतीत होती थीं।

पूज्य गुरुदेव के जिस स्वरूप की मैं यहाँ झाँकी दिखाने का साहस कर रही हूँ, वह था उनका जन कल्याणकारी स्वरूप। उनकी आध्यात्मिक अमृत वर्षा से परितृप्त एवं स्नेहासिक्त होने का सौभाग्य तो बहुतों को मिलता रहा। साथ ही साथ उनके वरद हस्त का अनुभव भी बहुतों ने किया होगा। पूज्य स्वामी जी सबके त्राता थे। संसार से पीड़ित एवं निराश्रित व्यक्ति उनकी स्नेह भरी गोद में सदा के लिये त्राण पा लेता था। उनका हृदय विशाल था। हर किसी की हर समस्या को पता नहीं हृदय के किस कोने में सुरक्षित संजो लेते थे। दुखियों को सान्त्वना मात्र ही नहीं, शक्ति कष्ट-निवारण में भी सहयोग देते थे। पारिवारिक – मानसिक तथा शारीरिक – सब प्रकार के क्लेशों में अपना अमूल्य निर्देश तथा परामर्श दे कर समस्या को सुलझा देना उनके बांये हाथ का खेल था।

कोई निर्धन है, कोई बेरोजगार है, कोई पति से दु:खी है, कोई पत्नी से परेशान है, किसी को सन्तान के व्यवहार से असन्तोष है तो कोई समाज द्वारा अपमानित, पूज्य स्वामी जी की चरण-शरण में आये हुए प्रत्येक व्यक्ति को अपने मनोनुकूल विश्रान्ति प्राप्त होती थी। जन-जन के हृदयों पर उनका साम्राज्य था; प्रत्येक परिवार के वह मान्य सदस्य थे। हर कोई उन्हें अपना ही समझ हृदय उड़ेल देता था। उनके सम्मुख कोई लज्जा-संकोच एवं दु:ख का प्रश्न नहीं था। वह घर-घर की, जन-जन की अशान्ति एवं आन्तरिक भावनाओं के सच्चे ज्ञाता थे। उनके पावन प्रेम की अमृत वर्षा से दुष्ट से दुष्ट भी सन्मार्ग पर चल पड़े।

वे निर्धनों के धन, दीन दु:खियों के दीनबन्धु, रोगियों के चिकित्सक, निराश्रयों के आश्रय दाता, निस्सन्तानों की सन्तान, अशान्तों के शान्ति दाता थे। जिसने जिस रूप में गुरुदेव से याचना की उसने उसी प्रकार का प्रसाद पा लिया। ऐसे महान हुतात्मा पूज्य स्वामी जी ने अपने साधना-परिवार में से ऊँच-नीच के भेदभाव को सदा के लिये भगा दिया था; क्योंकि उनकी दृष्टि में सभी समान थे – धनी और निर्धन, छूत और अछूत, सब उन्हीं के आंचल के महकते हुए फूल थे। देखने को उनकी जेब तो खाली थी लेकिन वे सैकड़ों से दूसरों की सहायता करते रहे। विधवाओं को आयु भर गुजारे का प्रबन्ध; मेधावी

किन्तु निर्धन छात्रों की पुस्तकों एवं पैसों से सहायता, नंगे तनों पर वस्त्राच्छादन – क्या बात थी स्वामी जी के लिये। एक बार किसी की सहायता के लिये हाथ उठा नहीं कि वह जीवन भर के लिये निहाल हो गया।

उनका जीवन सेवा एवं साधना का मूर्त रूप था। सामाजिक रूप से उच्च एवं उदार दृष्टि कोण – जन मात्र की सहायता – अपने सर्वस्व से दूसरों का कल्याण – ये थीं विशेषतायें उस महात्मा साधु की जो वर्तमान युग के अन्य साधुओं में मिलनी नितान्त कठिन ही नहीं, असम्भव सी हैं। वह अपने साधकों को आध्यात्मिक गौरव के साथ-साथ सामाजिक उच्चता – सहयोग तथा उदारता का भी पाठ पढ़ाते रहे। उनका जीवन आध्यात्मिक एवं सामाजिक साधना का समन्वित रूप था। सेवा ही साधना है – यह मन्त्र उन्होंने अपने जीवन में चरितार्थ किया था। यही कारण था कि वह इतनी अल्पावस्था में इतना कुछ कर गये जितना कोई सौ वर्षो में शायद ही कर सके। वे इतना कुछ हमें दे गये जिसे सम्हालने में हमारी बुद्धि अशक्त है।

जीवन के मोड़ पर घर बार त्याग कर संन्यासी की भाँति हिमालय की कन्दराओं में अपने जीवन को साध कर पूज्य गुरुदेव हमें एक ऐसा सन्देश दे गये हैं जो हमें इस समय भी एकता एवं शान्ति के सूत्र में पिरोये हुए है।

यद्यपि उनका स्थूल शरीर हमारे मध्य नहीं है तथापि वे आज भी हमारे लिये शान्ति एवं प्रेरणा के प्रतीक हैं। उनके चरण चिन्हों पर चलते हुए निश्चय ही हम जीवन का वह लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं, जिसे आध्यात्मिक भाषा में 'मोक्ष' की संज्ञा दी जाती है। अत: आवश्यकता है आज भी उस दिव्य मानव की उस अमर आज्ञा के पालन की जो हमें समानता तथा दिव्यता का सन्देश देती है। जन-जन के ऐसे कल्याणकारी-शान्ति दाता गुरुदेव के चरणों में शतश: शब्द रूपी पुष्पांजलि श्रद्धा सहित सादर समर्पित है।

– श्रीमती शकुन्तला ऋषि, प्रभाकर

❖ ❖ ❖

स्वामी रामानन्द जी की आध्यात्मिकता देन

(पुरानी पत्रिका से उद्धृत)

स्वामी विवेकानन्द का दृढ़ विश्वास था कि भारत का भविष्य अति उज्ज्वल है और उन्होंने यह भविष्यवाणी की थी कि आने वाले वर्षों में इस देश में बड़े-बड़े सन्त व महात्मा जन्म लेंगे जो अपनी अलौकिक प्रतिभा द्वारा भारत में ही नहीं, अपितु सारे संसार में एक नवीन आध्यात्मिक व नैतिक क्रान्ति उत्पन्न करेंगे। निस्सन्देह स्वामी रामानन्द इसी क्रान्ति के अग्रदूतों में से थे जो समयानुकूल एक नवीन आध्यात्मिक सन्देश देने के लिये हम लोगों के बीच में भेजे गये थे। वे उच्च संस्कारों को लेकर तथा एक दिव्य आध्यात्मिक निधि से विभूषित होकर यहाँ आये थे। परन्तु इसमें भी सन्देह नहीं कि इसके साथ-साथ कई बाहरी प्रभावों का भी उनके आध्यात्मिक जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा था। इनमें से निम्नलिखित मुख्य प्रतीत होते हैं:-

(1) परमहंस रामकृष्ण देव की जीवनी तथा उनकी शिक्षायें – अल्मोड़ा में रामकृष्ण परमहंस के जन्मोत्सव के अवसर पर भाषण देते हुए उन्होंने बड़ी ही ओजस्वी भाषा में उनके प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पण करते हुए कहा था – ''अगर अपने प्रारम्भिक

काल में मैंने परमहंसदेव के जीवन तथा शिक्षाओं का अध्ययन न किया होता तो सम्भवत: मेरे जीवन का स्वरूप ऐसा न होता जैसा कि इस समय है''। 'माता' या 'माँ' के रूप में भगवान् का चिन्तन, उनकी कृपा पर अटल विश्वास, शक्ति के जागरण के लिये जगत्-जननी महाशक्ति का आवाहन, अध्यात्म साधन में संकीर्तन का महत्व आदि बातों की पुष्टि तथा विकास सम्भवत: इसी प्रभाव का फल है।

(2) स्वामी रामदास द्वारा लिखित पुस्तकें और विशेषकर उनकी पुस्तक "At the Feet of God" – इस पुस्तक की एक प्रति उन्हें लाहौर में उस समय प्राप्त हुई थी जबकि उनके आध्यात्मिक जीवन का निर्माण हो रहा था। उस पुस्तक की जिल्द पर उन्होंने अपने हाथ से लिखा है – "A blessed Gift from Rama is this Booklet" अर्थात् यह पुस्तिका मेरे लिये श्री राम का एक दिव्य उपहार है, इस पुस्तक के जिन-जिन वाक्यों से वे विशेष प्रभावित हुए उनको उन्होंने रेखांकित किया है और हासिये (Margin) में 'Good', 'Very good', 'Grand' अर्थात् उत्तम, अत्युत्तम आदि टिप्पणियाँ भी लिखी हैं। प्रतीत होता है कि रामनाम के प्रति श्रद्धा बढ़ाने में, समर्पण की भावना को पुष्ट करने में तथा सन्तोचित व्यावहारिक व आध्यात्मिक गुणों को विकसित करने में इस पुस्तिका का उन पर विशेष प्रभाव पड़ा होगा।

(3) स्वामी सत्यानन्द जी – ये स्वामी जी के मन्त्र गुरु थे जिनसे उन्होंने रामनाम की दीक्षा प्राप्त की थी। इनके व्यक्तित्व एवं भाषणों का उन पर विशेष प्रभाव पड़ा था। यदि यह भी कहा जाये कि अपने स्वभाव की मधुरता, मन की प्रफुल्लता, अपनी भाषण शैली तथा इधर-उधर घूम कर लोगों को अध्यात्म, विशेष कर राम नाम का सन्देश देने के लिये वे स्वामी सत्यानन्द जी के पर्याप्त मात्रा में ऋणी थे तो यह कोई अनुचित बात न होगी।

(4) श्रीमद्भगवद् गीता – हमारे अध्यात्म साहित्य में जिस पुस्तक का सबसे अधिक प्रभाव उनके जीवन व विचारों पर पड़ा, वह है 'गीता'। वह गीता के रंग में पूरी तरह रंगे हुए थे, गीता की मानो वे जीवित जाग्रत मूर्ति थे। जिस साधन-पथ का उन्होंने लोगों में प्रचार किया वह प्रधानत: गीता पर ही आधारित है। इस आधार को पाकर ही वह यह कहने में समर्थ थे: ''मैं तो जीवन को और जीवन की जिम्मेदारियों को प्रभु से स्वीकार करना ही जानता हूँ। जिसे संसार बन्धन कहता है, वह ऐसा होने से मुक्ति साधन किंवा पूजा हो जाती है। जिसे संसार भोग कहता है, वह प्रभु की सेवा हो जाती है; उनके तन-मन्दिर का पूजन हो जाती है।''

इसके अतिरिक्त मध्य युग के सन्तों के जीवन का भी उन पर काफी प्रभाव प्रतीत होता है; उन्हीं से उनके शक्ति तथा अवरोह सम्बन्धी विचारों की बहुत कुछ पुष्टि होती है। उन्होंने थियोसोफी (Theosophy) व पाश्चात्य दार्शनिकों के विकासवादी साहित्य का भी गम्भीर अध्ययन किया था। इसका प्रमाण हमें उनके "Evolutionary Spiritualism" से मिल जाता है, यद्यपि उनके सिद्धान्तों का मुख्य आधार स्वयं उनकी अपनी अनुभूति है।

इस प्रकार हम यह देखते हैं कि इन कई एक आध्यात्मिक विचारधाराओं का उस अलौकिक आध्यात्मिक प्रतिभा से एकीकरण कर जो अपनी साधना के फलस्वरूप उनके अन्दर स्वत: विकसित हुई थी, उन्होंने उस साधन पथ का एक प्रकार से आविष्कार किया, जिसमें ''अभीप्सा की, समर्पण की, अनन्यता की, प्रेम तथा सेवा की मांग है; जिसमें मांग है सौम्यता की, पूरी तरह से प्रभु का होकर उन्हीं के लिये जीने की''। यही स्वामी रामानन्द जी की हमारे लिये दिव्य देन है जिसके लिये हम उन्हें हृदय से श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

– श्रीनिवास जोशी, अल्मोड़ा

हर देश में तू, हर वेश में तू

(श्रीमती कमल जी राठी 'साधन')

हम बचपन से यह स्तुति, प्रार्थना सुनते आ रहे हैं – **हर देश में तू, हर वेश में तू, तेरे नाम अनेक तू एक ही है – तेरे नाम अनेक तू एक ही है।** हमारे यहाँ अनेकता में एकता है, न सिर्फ मनुष्य बल्कि पशु-पक्षी, पर्वत, नदियाँ, पेड़-पौधे सब में हमने उस परम तत्त्व को देखा है, उसका दर्शन किया है, उसकी पूजा की है और समय-समय पर यह बात सिद्ध भी हुई है। गंगा मैय्या, राजा भागीरथ के बुलाने पर धरती पर अवतरित हुईं। उनके पूर्वजों का उद्धार कर दिया। जलरूप में वे ब्रह्मद्रव हैं, पतितपावनी हैं। वहीं कर्माबाई के बुलाने पर प्रभु उनकी खिचड़ी खाने स्वयं पधारते थे, तो वहीं उन्होंने अपने स्पर्श से पत्थर की शिला को अहल्या बना दिया – **'परसत पद पावन सोक नसावन प्रगट भई तप पुंज सही'।** यह है हमारी आस्था! विभिन्न रूपों में होते हुए भी वे परमात्म प्रभु एक ही हैं।

वैसे ही हमारे यहाँ 'आराधना' के विभिन्न स्वरूप हैं, कहीं ज्ञान-ध्यान से आराधना, तो कहीं मूर्ति रूप में साकार, तो कहीं अद्वैत निराकार रूप में। सृष्टि उसी का विलास मात्र है। कहीं द्वैत देखते हुए मीरा, चैतन्य महाप्रभु, नृसिंह मेहता ने प्रभु को पाया है – तो कहीं दास भाव से, कहीं सखा भाव से तो कहीं लाला को वात्सल्य भाव से गोद में खिलाया है। अभी की स्थिति की बात करें तो, नर को नारायण समझ डॉक्टर, वैज्ञानिक, सेवाकर्मी, सामाजिक कार्यकर्ता दिन-रात सेवा-यज्ञ में कर्मरूपी आहुतियाँ डाल रहे हैं।

प्रभु ने स्वयं कहा है – यह सृष्टि भी मैं हूँ, सृष्टिकर्ता भी मैं ही हूँ। ताप भी मैं हूँ, बादल (बरसात) भी मैं ही हूँ, यानी सर्वत्र प्रभु-ही-प्रभु हैं, फिर क्यों व्यक्ति-व्यक्ति में भेद, धर्म में भेद, सम्प्रदाय में भेद – यह सब भेद विभिन्नता के लिये नहीं, बल्कि व्यक्ति विशेष की रुचि एवं उसके अधिकार के कारण हैं।

अध्यात्म में अनेकता के साथ एकता का सुन्दर उदाहरण देखने को मिलता है – ठाकुर यानी रामकृष्ण परमहंस ने न कोई औपचारिक शिक्षा ली, न किसी स्कूल गये, न ही किसी शास्त्र का अध्ययन किया, फिर भी ज्ञान में परमहंस की उपाधि से अलंकृत! हम सब जानते हैं, ठाकुर काली के अनन्य भक्त थे। माँ काली से उनकी प्रत्यक्ष बातचीत थी। वे हर काम उनकी आज्ञा – उनकी सलाह से ही करते थे, कहते हैं – यहाँ तक कि माँ काली ठाकुर के हाथ से भोजन भी करती थीं। उनके जीवन-चरित्र में आता है, बाबा तोतापुरी उन्हें वेदान्त यानी अद्वैत ज्ञान का उपदेश देने आये – उनका जवाब था, माँ से आज्ञा लेकर बताऊँगा। दूसरे दिन नियमानुसार माँ के भी विग्रह के सामने खड़े होकर पूछते हैं, माँ! नागा बाबा आते हैं शिक्षा देने, माँ का जवाब था, मैंने ही उन्हें यहाँ आने के लिये प्रेरित किया है, मेरे कहने से ही वे यहाँ आ रहे हैं। विचार की बात है, ठाकुर स्वयं सर्वोच्च उपाधि से अलंकृत, माँ काली के परम भक्त और माँ ने ही व्यवस्था कर दी, अद्वैत ज्ञान की। चेतना की जागृति इतनी कि नरेन्द्र के सिर पर हाथ रखते ही 'नरेन्द्र' से 'विवेकानन्द' बन गये, अनुभव ठाकुर का और अभिव्यक्ति विवेकानन्द द्वारा। हम सब जानते हैं विदेश में दिया गया उनका सर्वप्रसिद्ध भाषण। वहाँ एक व्यक्ति ने उनसे प्रश्न किया, आप हिन्दुओं में इतने भगवान् क्यों हैं? उनका जवाब सुनिये – उनका कहना था 'मेरे विचार से यह भी कम है, हमारी इतनी जनता है, हर एक व्यक्ति के अपने मौलिक विचार हैं, अपनी सोच है, उसके अनुसार ही उनकी अभिव्यक्ति के लिये भगवान् की अलग-अलग छवि होनी चाहिए।

यह है हमारी संस्कृति, हम सबके साथ हैं, पर अपनी आस्था के खूँटे से बँधे सहज, सरल प्रवाह में चल रहे हैं, जिस तरह समुद्र अपनी मर्यादा में बहते हुए, अपने किनारों को संयमित रखता है।

मूल सत्य एक ही है, जिसे बुद्धिमान् अनेक नामों से बुलाते हैं – **'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति।'**

(कल्याण से उद्धृत)

साधक का कर्तव्य

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्री शरणानन्द जी महाराज)

गुण और दोषों को देखने की शक्ति हरेक मनुष्य में विद्यमान है। जिस योग्यता से वह दूसरों के दोषों को देखता है, उसी योग्यता से अपने दोषों को देखे। अपने दोषों को ठीक-ठीक देख लेने पर दु:ख होता है और दु:ख होने से दोष दूर हो जाते हैं।

दूसरों के दोष और अपने गुण देखने से मनुष्य का विकास रुक जाता है और अभिमान पुष्ट होता है तथा कर्तव्य से निराश होने पर भी विकास रुक जाता है। अत: साधक को चाहिए कि अपने गुणों को न देखे, पराये दोषों को न देखे और कर्तव्य से निराश न हो। जो सचमुच साधक होता है, उसे पराये दोष देखने की फुरसत ही नहीं रहती और उसे दीखते भी नहीं।

पराधीन व्यक्ति साधन नहीं कर सकता। अत: साधक को चाहिए कि दूसरों से किसी प्रकार की आशा न करे। अपनी रुचि और योग्यता के अनुसार तत्परता से साधन करता रहे। अपनी योग्यता का अध्ययन करे कि मैं क्या-क्या कर सकता हूँ। जो कर सकता हो, उसके अनुसार दृढ़तापूर्वक साधना करने की चेष्टा करे। फिर जो कठिनाई आये, उस पर विचार करने पर बराबर रास्ता दिखलायी देता रहेगा। आजकल लोग अपनी योग्यता को नहीं देखते कि हम क्या कर सकते हैं। केवल पूछते रहते हैं कि क्या करना चाहिए। इससे काम नहीं चलता। करने लायक साधन तो असंख्य हैं; परन्तु उसके तो वही काम आयेगा, जो वह स्वयं कर सकता हो। साधन बहुत बढ़िया हो, परन्तु जो नहीं कर सके उसके काम का नहीं। अत: साधन वही ठीक है, जो वह कर सके तथा जिसमें साधक का प्रेम और विश्वास हो।

कठिनाई एक प्रकार का तप है। तप के बाद सामर्थ्य आती है। यह नियम है। अत: साधक को कभी निराश नहीं होना चाहिए। प्राप्त योग्यता के अनुसार साधना करते रहना चाहिए; क्योंकि न जानने का दोष इतना प्रबल नहीं है, जितना कि न करने का दोष है। अत: साधक को चाहिए कि जानने के पीछे न पड़े, जो कुछ जाना है, उसके अनुसार करना आरम्भ कर दे। न करने के दोष को मिटा दे एवं जिसको न कर सके, उसके करने की इच्छा का त्याग कर दे। जानना तो एक प्रकार का प्रकाश है। जिसके हाथ में सर्च लाइट या लालटेन का प्रकाश है, वह उसे लेकर चलता रहेगा तो जितना चलेगा उतना ही उससे आगे का मार्ग दीखने लगेगा। इस प्रकार वह बहुत दूर चला जा सकता है। परन्तु यदि इस आशा पर वहीं खड़ा रहे कि जब आखिर तक प्रकाश हो जायेगा, पूरा रास्ता दिखलायी देगा, तब चलना आरम्भ करूँगा तो वह थोड़ी दूर भी नहीं जा सकेगा। चलते रहने से एक के बाद दूसरी शक्ति अपने-आप आती रहेगी। अत: साधक को चाहिए कि जो कुछ भी वह थोड़े-से-थोड़ा जानता है, उसके अनुसार चलना आरम्भ कर दे।

ईश्वर को प्राप्त करने में कर्म की अपेक्षा नहीं है। उसमें तो एकमात्र लालसा चाहिए, व्याकुलता चाहिए। साधक जितना अधिक प्रभु के लिये व्याकुल होगा, उतनी ही शीघ्रता से उसे भगवान् मिलेंगे। उनको पाने के लिये तो व्याकुलता का महत्त्व है।

भोगों की प्राप्ति व्याकुलता से नहीं होती, भोग कर्म करने से मिलते हैं, अत: उनकी प्राप्ति के लिये कर्म का महत्त्व है। यदि कोई कहे कि मुझसे भगवत्-चिन्तन नहीं होता तो उसे सोचना चाहिए कि फिर मैं विषयों का चिन्तन क्यों करता हूँ। जिस शक्ति से वह विषयों का चिन्तन करता है, उसी शक्ति को ईश्वर-चिन्तन में लगा देना चाहिए।

क्योंकि चिन्तन करना मनुष्य का स्वभाव है; जब वह ईश्वर-चिन्तन नहीं करता, तब विषयों का चिन्तन करता है। कोई भला काम नहीं करता तो बुरा करता है। यदि कुछ न करे तो भी बहुत ठीक है; परन्तु बिना करे तो रहे नहीं और करने योग्य काम करे नहीं, उलटा करे तो यह साधन नहीं है। इससे विकास नहीं हो सकता।

(कल्याण से उद्धृत)

शिष्यों के जीवन में रंग भरने वाला चित्रकार है गुरु

व्यक्ति का महत्व नहीं, उसकी गुरुता और उसके गुण का महत्व है। इसलिये व्यक्ति के गुण की पूजा की जाती है, व्यक्ति तो केवल एक माध्यम है। जीवन नैय्या के खेवैया सद्गुरु हैं। बिना उनकी कृपा के न तो ज्ञान प्राप्त होता है, न ही हमारी नैय्या पार लगती है। भारतीय तत्वज्ञान का मानना है कि गुरु के बिना कोई भी व्यक्ति भवसागर को पार नहीं कर सकता है। इस सन्दर्भ में सद्गुरु हमारे जीवन के कर्णधार हैं। सद्गुरु सूर्य के समान हैं, तो वह चन्द्र के समान भी हैं। सूर्य का काम विकास करने का है और चन्द्र का काम पोषण करने का। सद्गुरु जीवन को विकसित करते हैं, उनकी कृपा से आध्यात्मिक विकास सम्भव है।

तुलसीदास ने भी कहा है कि गुरु की चरण-रज भगवान शंकर के देह पर लगी भस्म जितनी पवित्र है। गुरु का स्मरण करते ही दिव्य दृष्टि मिल जाती है। जैसे आंखों में सुरमा लगाने से आंखों के दोष दूर होते हैं, वैसे ही गुरु के चरण रज से दृष्टि के दोष दूर होते हैं। इसे कुम्हार और चित्रकार की भूमिका से भलीभाँति समझा जा सकता है। कुम्हार मिट्टी के बर्तन बनाने के लिये पहले मिट्टी लाता है, उससे कंकड़ और खरपतवार साफ करता है, फिर उसमें पानी डालकर उसे अच्छे से रौंदता है और उसे बर्तन बनाने के योग्य बनाता है। फिर उसे चाक पर चढ़ाकर उचित आकार देता है। यही स्थिति चित्रकार की है। वह पहले अपने दिमाग में उस चित्र का एक खाका बनाता है। फिर उसे कागज़ पर उतारकर उसमें तरह-तरह के रंग भरता है, उसे हर दृष्टिकोण से देखता है, ताकि कोई कमी न रह जाये। ठीक वैसी ही स्थिति गुरु की है। वह शिष्य को साधना के चाक पर चढ़ाकर उसे उसकी योग्यता के अनुसार आकार देते हैं।

इसके पहले गुरु अपने अनुभव के आधार पर शिष्य को परखते हैं। उनकी परख अद्भुत होती है। वह शिष्य की भूमिका और योग्यता को समझ जाते हैं। जिसकी जैसी भूमिका होती है, उसे उसी योग्य बनाने में अपना ज्ञान शिष्य में उडेल देते हैं। कुम्हार की तरह ही गुरु शिष्य की क्षमता के अनुसार कभी सख्ती से पेश आते हैं, कभी दण्ड देते हैं और कभी पुचकारते हैं। अब शिष्य का कर्तव्य है कि कभी गुरु के वचन कटु भी लगें, तो यह समझे कि उस कटुता में गुरु का वात्सल्य छिपा होता है। माँ अपने बच्चे के लिये सुस्वादु भोजन तैयार करती हैं और पहले चखकर देख लेती हैं। लेकिन जब बच्चा बीमार पड़ता है, तब उसके उपचार के लिये कड़वी दवा पिलाने में जरा भी संकोच नहीं करती। उसी प्रकार सद्गुरु भी कभी-कभी तुम्हारे रोग को दूर करने के लिये कटुवचन भी कहते हैं। उनके कटुवचन भी अमृत के समान होते हैं।

यह भी ज़रूरी नहीं कि गुरु सदेह ही होने चाहिए। आप रामकृष्ण परमहंस, महर्षि अरविन्द, रमण महर्षि, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द जी को ही लें। आज वे हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन वे हमारा मार्गदर्शन कर रहे हैं, हम उनके उपदेशों से ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं। एकलव्य के पास द्रोणाचार्य सदेह नहीं थे, लेकिन एकलव्य की जो उनमें श्रद्धा थी, उसी से उन्हें गुरु का आशीर्वाद मिल गया। सभी जानते हैं कि वह इतना श्रेष्ठ धनुषधारी बना कि उसमें अर्जुन से भी टक्कर लेने की क्षमता आ गई।

रमेश भाई ओझा

प्रस्तुतिः सुभाष चन्द्र शर्मा

संकलन कर्त्ताः पी.बी. श्रीवास्तव,

एडवोकेट (कानपुर)

कानपुर साधना शिविर-2024

कानपुर साधना शिविर का शुभारम्भ 22 अक्तूबर 2024 के अपराह्न में हुआ और पूर्ति 25 अक्तूबर की प्रातः काल में। कुल मिलाकर लगभग 110 साधकों ने इस शिविर में भाग लिया। पूर्ति के समय लगभग 250 व्यक्तियों ने भण्डारे का प्रसाद ग्रहण किया।

प्रवचन सार

श्री शिव कुमार जायसवाल जी

गीता के अध्याय 2 के श्लोक संख्या 11 से 30 तक भगवान् ने अर्जुन को आत्मा की अमरता का उपदेश दिया है। भगवान् कहते हैं कि अर्जुन! आत्मा अमर है। जिस प्रकार शरीर में बालक, युवा और ज़रा अवस्था आती है उसी प्रकार अन्य शरीर की प्राप्ति होती है। अतः इस विषय में शोक नहीं करना चाहिए।

व्यष्टि में जो सेवा है वही समष्टि में यज्ञ हो जाती है। इसलिये हमें मन, वाणी और शरीर से दूसरों की सेवा करते रहनी चाहिए। जड़, वनस्पति, पशु, पक्षी सहित समस्त सृष्टि अनजाने में सेवा करते रहते हैं। इस प्रकार यह सृष्टि सेवा से चलती है। छोटी-छोटी सेवा हमें भगवान् से जोड़ देती है।

हमें गुरु भगवान् के आगे समर्पण कर देना होगा। ज्ञानी पुरुष के पास जाकर उनको दण्डवत् प्रणाम करके सरलतापूर्वक प्रश्न करने चाहिए। तब वह हमें ज्ञान का उपदेश देंगे।

हमें नाम जप खूब करना चाहिए। सब कर्तव्य कर्म करते हुए प्रभु का नाम स्मरण करते रहें, इससे हमारे अन्दर सौम्यता, सरलता आती चली जाती है और हम भगवान् के अति निकट होते चले जाते हैं।

गीता के अध्याय 7 में भगवान् ने कहा है कि हमें केवल एक की शरण में जाना चाहिए। यदि हम अन्य देवताओं की शरण में जाते हैं तो सांसारिक कामनायें तो पूरी हो जाती हैं लेकिन वो टिकाऊ नहीं होती। यदि हम भगवान् को पूजते हैं, उन्हीं की शरण होते हैं तो भगवान् हमें वही देते हैं जिसमें हमारा कल्याण निहित है।

बहन गीता जायसवाल जी

गीता के अध्याय 7 के श्लोक 14 में भगवान् ने बताया है कि मेरी माया पार करना अति दुस्तर है किन्तु जो मेरी शरण में आते हैं वे संसार सागर से शीघ्र ही पार हो जाते हैं। भगवान् की माया तीन गुणों वाली है और तीनों ही गुण बन्धन में डालने वाले हैं। सतोगुण ज्ञान और सुख की आसक्ति से बाँधता है, रजोगुण ममता, आसक्ति, लोभ, मोह आदि से बाँधता है और तमोगुण भोग और संग्रह की आसक्ति से बाँधता है। इस माया से पार पाने का सुगम उपाय है शरणागति अर्थात् सभी वस्तुओं को भगवान् की और भगवान् के लिये मान लेना।

हम जहाँ भी रहें हर समय भगवान् के नाम का स्मरण करते रहें और सभी शारीरिक सम्बन्धों को भगवान् से जोड़ दें। हम प्रत्येक कार्य के आरम्भ में, मध्य में और अन्त में भी भगवान् को याद करते रहें।

बहन कुसुम सिंह जी

गीता अध्याय 15 के श्लोक 5 में भगवान् ने परमात्मा को प्राप्त भक्त के लक्षण बताये हैं। जो मान और मोह से रहित हो गये हैं, जिन्होंने आसक्ति से होने वाले दोषों को जीत लिया है, जिन्होंने परमात्मा की प्राप्ति का उद्देश्य बना लिया है, जो नित्य निरन्तर परमात्मा में ही लगे हैं, जो सम्पूर्ण सांसारिक कामनाओं

से रहित हैं, जो सुख दुःख नाम वाले द्वन्द्वों से ऊपर उठ गये हैं, जिनकी परमात्मा में ही आसक्ति है – ऐसे मोह-रहित साधक परमात्मा को प्राप्त होते हैं।

साधक भगवान् को पहले अपने से दूर देखता है, फिर नज़दीक देखता है, उसके बाद अपने में ही देखता है। भक्त जो भगवान् के अति निकट है वह सर्वत्र परमात्मा के ही दर्शन करता है। उसकी नज़र में सर्वत्र परमात्मा ही परमात्मा है।

ऐसा प्रेमी भक्त भगवान् के परम पद को प्राप्त होता है। ऐसे भक्त का योगक्षेम भगवान् स्वयं करते हैं। इसलिये भगवान् का नाम जप, सत्संग, मनन, स्वाध्याय खूब करना चाहिए।

श्री जगत सिंह जी

सत्संग की बड़ी महिमा है। भगवान् राम ने स्वयं शबरी के प्रति कहा है –

प्रथम भगति संतन्हि कर संगा।

सत्संग से हर समस्या का समाधान होता है। हमारी वाणी में इतनी मिठास और हृदय में इतना प्रेम हो कि हम दूसरों के दिलों को जीत लें। स्वामी जी कहते हैं – सेवा तन से, मन से, धन से और वाणी से भी की जा सकती है। वाणी सत्य हो, प्रिय हो और हितकारी हो।

बहन स्वर्णिमा जी

हर श्वास में गुरुदेव हमारे साथ रहते हैं, उनकी वाणी, उनकी शिक्षा सदैव हमारा मार्गदर्शन करती रहती है। गुरु कृपा से हमारी दृष्टि बदल जाती है, सबमें राम के दर्शन होने लगते हैं, हर कार्य पूजा होने लगता है। पार्वती जी पहले विष्णुसहस्र नाम का पाठ करती थीं, बाद में राम नाम का जाप करने लगीं।

बहन कुसुम माहेश्वरी जी

पूज्य स्वामी जी कहते हैं निर्मलता मुझे प्रिय है। जिसका मन निर्मल होगा उसके मुख-मण्डल पर मधुर मुस्कान होगी, हृदय में गूँजता राम नाम का जाप होगा और मुख में प्रेम भरी वाणी होगी। मन को निर्मल करने के लिये हमें दूसरों की गलतियों को क्षमा करना सीखना होगा। गीता के अध्याय 16 में जो दैवी सम्पदा वालों के 26 गुण बताये गये हैं उनमें एक क्षमा भी एक गुण है। पूज्य स्वामी जी ने कहा है कि कमियाँ तो सभी में होती हैं – दूसरों में भी और हम में भी। दूसरों की गलतियों को हमें अपने अन्दर प्रवेश नहीं करने देना है जैसे शंकर भगवान् ने हलाहल विष को अपने गले में धारण कर लिया था, अन्दर नहीं जाने दिया था। कभी-कभी हम स्वार्थवश या भयवश भी क्षमा कर देते हैं किन्तु वास्तविक क्षमा वह होती है जो स्वयं को निर्मल करने के लिये की जाती है।

हमें अपनी कमियों और दूसरों के गुणों को देखने की आदत डालनी है। खूब राम नाम का जाप करना है, इससे ही सब कुछ होता चला जाता है।

श्री योगेन्द्र पाण्डेय जी

गुरु वही होता है जो गुणातीत होता है। जो तीनों गुणों – सत, रजस और तमस से ऊपर उठ गया उसे किसी चीज़ की लालसा नहीं होती। ये तीनों गुण माया के रूप हैं – भगवान् मायापति हैं। गीता के अध्याय 14 में गुणातीत के लक्षणों का वर्णन किया गया है, जिसका पाठ हम साधकगण गीता के सत्र में प्रतिदिन किया करते हैं। ज्ञान क्या है – अध्यात्म ज्ञान व तत्त्व ज्ञान विचार – यह सब ज्ञान है जिसका निरूपण गीता के अध्याय 13 में किया गया है।

गीता के अध्याय 12 में भगवान् ने बताया है - अभ्यास से शास्त्रज्ञान श्रेष्ठ है, शास्त्रज्ञान से ध्यान श्रेष्ठ है और ध्यान से भी सब कर्मों के फल की इच्छा का त्याग श्रेष्ठ है(क्योंकि त्याग से तत्काल ही परम शान्ति प्राप्त हो जाती है।

श्रीरामचरितमानस में भगवान् राम ने लक्ष्मण के

पूछने पर ज्ञान, वैराग्य, माया, ईश्वर और जीव के विषय में जो उपदेश था वह **'राम-गीता'** के नाम से प्रसिद्ध है।

श्री केवल कृष्ण नैय्यर जी

हम सभी के शरीर में पाँच लाख करोड़ कोषिकायें होती हैं और उन सभी का सम्पर्क श्री भगवान् से होता है। भगवान् की मशीनरी बहुत ही अद्भुत होती है। भगवान् ने सभी जड़ चेतन वस्तुओं को बनाया है, इसलिये हमें सभी में भगवान् का दर्शन करना चाहिए। कभी-कभी भगवान् कुत्ते के रूप में आकर भी भोग लगा जाते हैं।

श्री सुभाष ग्रोवर जी

भगवान् असीम हैं, उनकी महिमा का वर्णन कोई भी नहीं कर सकता। मनुष्य शरीर हमें परमात्मा की प्राप्ति के लिये ही मिला है। सन्त तुलसीदास ने भी कहा है –

एहि तन कर फल बिषय न भाई।
स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाई॥

प्रारब्ध पहले बनता है, बाद में शरीर बनता है। हम सांसारिक सुखों की कामना करते रहते हैं लेकिन वो सभी नाशवान हैं। अत: हमें एकमात्र भगवत् प्राप्ति की ही कामना करनी चाहिए। भगवान् से हमारा सम्बन्ध पहले से ही है, हमें उन्हें पहचानना है। अपने अहम् के कारण हम उनको पहचान नहीं पाते। पहले भगवान् को मानना है, फिर जान भी जायेंगे। सुख-दु:ख, मान-अपमान आदि द्वन्द्वों से हमें दूर रहना है। सत्पुरुष जब मिलते हैं तो अच्छा लगता है और दुष्ट पुरुष जब मिलते हैं तो कष्ट मिलता है। जीवन सभी द्वन्द्वों से छूटने पर ही परमात्मा की प्राप्ति होती है।

बहन सुमन जायसवाल जी

सन्त तुलसीदास ने कहा है –

कबहुँ कि कर करुना नर देही।
देत ईस बिनु हेतु सनेही॥

मनुष्य शरीर कर्म योनि है। भगवान् ने गीता के अध्याय 2 में कहा है –

योगस्थ कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।

अर्थात योग में स्थिर होकर सिद्धि-असिद्धि में सम रहकर तू सभी कर्मों को कर।

हमारे जीवन में जो भी प्रतिकूलता आती है उससे हम सभी कुछ न कुछ सीखते हैं और प्रतिकूलता भी हमारी साधना में आगे बढ़ाने के लिये आवश्यक है। हमें निष्काम भाव से और समुचित मनोवृत्ति से ही काम करना चाहिए। हमें हर समय जागरूक रहना है। हमारी बुद्धि निश्चयात्मिका बुद्धि होनी चाहिएं। हम अपने कर्मों को मनुष्य योनि में ही क्षीण कर सकते हैं। हमें हर परिस्थिति को भगवान् का मंगलमय विधान समझना है। हम जहाँ भी हैं, जिन परिस्थितियों में हैं, उन्हीं में रहते हुए भगवान् से हर समय युक्त रहना है। हमें सभी कर्म भगवत भावना से करने हैं।

हमें हर परिस्थिति में खुश रहना चाहिए और हर समय राम नाम का जप करते रहना चाहिए।

बहन कान्ति सिंह जी

जिस प्रकार पानी के मथने से घी नहीं निकलता, बालू के मथने से तेल नहीं निकलता उसी प्रकार गुरु के बिना हमें ज्ञान नहीं मिलता है। हमें सभी कार्य करते हुए भगवान् से जुड़े रहना है। हमारा एक मन्त्र, एक शास्त्र और एक इष्ट होना चाहिए। हमें भजन, सत्संग, मनन, ध्यान ज़रूर करना चाहिए। जो बातें सत्संग में बताई जाती हैं उनको अपने जीवन में उतारना चाहिए। गीता के अध्याय 12 के श्लोक 6 के अनुसार अपने सभी कर्म भगवान् को अर्पित करके, सभी कर्म करते हुए भगवान् की याद बनाये रखनी होगी।

ईश्वर प्रेम है, प्रेम ही ईश्वर है। सेवा, प्रेम और

समर्पण का हमारे जीवन में बहुत ही महत्व है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा है –

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा।
दूसरि रति मम कथा प्रसंगा॥

हमारे गुरुदेव ने बहुत ही सरल साधना बताई है। बच्चे, बूढ़े, सभी कर सकते हैं। हमें एक को पकड़ना है –

एकै साधै सब सधे, सब साधै सब जाय॥

बहन अरुणा पाण्डेय जी

जब सब रास्ते बन्द हो जाते हैं तो हम गुरु की शरण आते हैं, उन्हीं की बातों को जीवन में उतारते हैं।

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जग पानी॥

हमें सर्वत्र भगवान् के दर्शन करने हैं। पूज्य गुरु महाराज ने कहा है – मैं आपसे केवल तीन बातों की सहमति चाहता हूँ –

1. दैवी संपत्ति के अस्तित्व में विश्वास,
2. दैवी अनुकम्पा पर विश्वास,
3. यह विश्वास कि नाम के द्वारा महाशक्ति से युक्त हो सकते हैं।

यदि आप इन तीनों बातों से सहमत हैं तो आप हमारे मार्ग पर आ जाओ।

हमारी साधना अनेक सन्तों के अनुभवों पर आधारित है। जो हमारी साधना का विरोध करते हैं, उन पर विश्वास नहीं करना है। नाम के द्वारा ही हम परमात्मा से युक्त रहते हैं।

बहन सुशीला जायसवाल जी

गीता क्या है? जैसे कोई यन्त्र चलने के लिये बुक मिलती है उसी प्रकार यह जो हमारा शरीर है इसे चलाने के लिये हमें गीता रूपी ग्रन्थ की आवश्यकता होती है। अर्जुन के माध्यम से भगवान् ने हमें बताया है संसार में कैसे व्यवहार करना है, कैसे बोलना है, कैसे रहना है। गीता के अन्त में भगवान् ने बता दिया कि अर्जुन तू सब धर्मों को त्याग कर मेरी शरण में आ जा, चिन्ता मत कर, मैं तुझे सब पापों से, विकारों से मुक्त कर दूँगा। शरण में आने के लिये चार बातें आवश्यक बताई गई हैं –

1. हमारा इष्ट एक होना चाहिए। जो भी कर्म करें, हमारा ध्येय भगवान् की प्राप्ति ही हो।
2. मन्त्र भी एक ही होना चाहिए जो अपने गुरुदेव से प्राप्त हुआ है। व्रत, उपवास आदि हमारे मार्ग की साधना नहीं है। हमारा आधार तो केवल राम नाम का जप है।
3. शास्त्र वही पढ़ना, सुनना है जो भगवान् की प्राप्ति करा दे। गीता और रामायण नियम से पढ़ने चाहिए।
4. हमारा कर्म भी एक ही होना चाहिए जो हमें अध्यात्म के मार्ग पर आगे बढ़ाना वाला हो। सुबह शाम दो घंटे जाप के अतिरिक्त भी जो कार्य करें उनमे भगवान् की याद बनाये रखें।

अन्त में बहन सुशीला जायसवाल ने शिविर के सं्चालन में सहयोग करने के लिये सभी साधकों का नाम लेकर धन्यवाद दिया, विशेष रूप से संयोजिका बहन कमला वर्मा जी एवं प्रबंधक श्री दीपक दीक्षित जी का। कोषाध्यक्ष, सजावट, फोटोग्राफी, भोजन व्यवस्था, बिजली व्यवस्था आदि सभी कार्य साधकों ने निष्ठापूर्वक निभाये। शिविर में 110 साधकों ने भाग लिया। पूर्ति के बाद भण्डारे का आयोजन किया गया जिसमें लगभग 250 लोगों ने प्रसाद ग्रहण किया।

बहन कुसुम माहेश्वरी ने योगाभ्यास का कार्यभार संभाला तथा बहन कुसुम सिंह व कान्ति सिंह ने प्रवचन सार लिखने का।

बीसलपुर साधना शिविर-2024

बीसलपुर साधना शिविर का शुभारम्भ 7 नवम्बर 2024 के अपराह्न में हुआ और पूर्ति 10 नवम्बर की प्रातः काल में। कानपुर से लगभग 60 साधक/साधिका भाई बहन इस शिविर में भाग लेने हेतु पधारे। कुल मिलाकर लगभग 100 साधकों ने इस शिविर में भाग लिया जिसमें से लगभग 75 भाई बहन बाहर से आये। पूर्ति के समय लगभग 250 व्यक्तियों ने भण्डारे का प्रसाद ग्रहण किया।

प्रवचन सार

बहन गीता जायसवाल

भगवान् ने विशेष कृपा करके मनुष्य शरीर दिया है। हम यहाँ आकर माया के चक्कर में फँस जाते हैं और प्रभु प्राप्ति के अपने वास्तविक उद्देश्य को भुला बैठते हैं। गीता के अध्याय 7 के श्लोक 14 में भगवान् ने कहा है कि मेरी माया बड़ी दुस्तर है। जब जीवात्मा संसार से अपना सम्बन्ध जोड़ लेता है तब वो तीनों गुणों में फँस जाता है लेकिन जो भक्त प्रभु की शरण में आ जाते हैं और विवेक से काम लेते हैं तो वे तीनों गुणों में नहीं फँसते हैं। जब हम संसार की वस्तुओं को अपना मान लेते हैं तो उनमें आसक्ति हो जाती है लेकिन जब हम नित्य निरन्तर भगवान् से जुड़े रहते हैं तो भगवान् की माया से पार पा जाते हैं।

श्री दीपक दीक्षित जी

गीता में भगवान् ने त्रिगुणमयी माया का उल्लेख किया है और इससे पार पाने का रास्ता भी बताया है। माया की रचना भी हमारे विकास के लिये ही की गई है। हमको सम्पूर्ण कर्मों को एकमात्र भगवान् को ही समर्पित करना है। सभी कर्म अनासक्त भाव से करने चाहिए। परिवार की ज़िम्मेदारी भगवान् का कार्य समझ कर निभानी चाहिए।

बहन रमना सेखड़ी जी

भगवान् ने गीता के माध्यम से हम सभी को सन्देश दिया है कि हमें अपने कर्मों को यज्ञ बनाना चाहिए। यदि हम प्रभु चरणों में लगे रहेंगे और निष्काम भाव से सभी कर्म करते हैं तो हमारा प्रत्येक कर्म यज्ञ हो जायेगा। हमें सभी के साथ सेवा, प्रेम और त्याग की भावना से कर्म करना चाहिए। प्रभु ने हमें अपार शक्ति दी है, इसका उपयोग हमें संसार के लिये ही करना चाहिए।

जप यज्ञ को सर्वश्रेष्ठ यज्ञ बताया गया है। नाम जप से हमारे सारे कुसंस्कार जल कर भस्म हो जायेंगे। मनुष्य शरीर में ही हम पुराने संस्कारों को क्षीण कर सकते हैं। समाज में सभी की अपनी-अपनी जिम्मेदारियाँ होती हैं। हमें हर समय भगवान् से जुड़े रहकर अपनी जिम्मेदारियाँ निभानी हैं। यदि सभी परिस्थितियों को भगवान् का मंगलमय विधान समझ लें तो हम विकास के मार्ग में आगे बढ़ जायेंगे।

बहन सुनीता दुआ जी

निज विकास के लिए ज़रूरी
विविध भली अरु बुरी अवस्था।
दे विवेक अरु शक्ति बनाई
कर्म स्वतन्त्र फल भोग व्यवस्था॥

हमें जीवन में सुख भी मिलता है और दु:ख भी। हमें अपने जीवन में सरल पाठ भी पढ़ने होते हैं और कठिन भी। तभी हमारा समुचित विकास हो पाता है। एक माँ के चार बच्चे होते हैं तो भी उनके विचार अलग-अलग होते हैं। इसलिये हमें सभी से सामंजस्य बिठाकर चलना होता है। हम बार-बार गिरते हैं और संभलते हैं। हमारे अन्दर बहुत जन्मों के संस्कार होते हैं, उन्हें क्षीण करने में समय लगता है, अत: हम धीरे-धीरे ही विकास के मार्ग में आगे बढ़ पायेंगे। गुरु की कृपा प्राप्त होने पर ही हमें सही मार्ग मिलता है। हमें सच्चे मन से भगवान् को पुकारना है, वो अवश्य सुनते हैं। हमारी हर समस्या का समाधान प्रभु ही कर सकते हैं। हमें जीओ और जीने दो की कला आनी चाहिए।

बहन मीरा दुबे जी

श्री गुरु महाराज जी ने बताया है कि हमारा जीवन आध्यात्मिक विकास के लिये होना चाहिए। हमारे जीवन का उद्देश्य प्रभु की प्राप्ति है जिसके लिये हमें नाम का सहारा लेना होगा। हमारे विकार धीरे-धीरे स्वत: ही शान्त होने लगते हैं। हमें अपने राग द्वेष को छोड़ना होगा। हमें अनन्य भक्ति द्वारा प्रभु से जुड़ना है। हमारे गुरुदेव हमें विभिन्न परिस्थितिओं के माध्यम से स्वच्छ और निर्मल करते चले जाते हैं।

बहन अरुणा पाण्डेय जी

पूज्य गुरुदेव महाराज ने **'मेरे विचार'** पुस्तक में लिखा है कि जो मेरी साधना में विश्वास रखते हैं उसके लिये हमारे मार्ग में आगे बढ़ने के लिये कुछ बातों में साधकों की सहमति आवश्यक है –

1. दैवी शक्ति पर विश्वास
2. दैवी शक्ति की अनुकम्पा पर विश्वास
3. राम नाम के द्वारा हम उस दैवी शक्ति से जुड़ सकते हैं।

परमात्मा की शक्ति के द्वारा ही इस विश्व का संचालन होता है। फूल खिलते हैं, दिन रात होते हैं, समुद्र के द्वारा वर्षा होती है। अनेकों सुविधायें प्रभु के द्वारा हम सभी को मिलती हैं। हम दुखी होते हैं अपने ही कर्मों के कारण, फिर भी हम भगवान् की शरण जाते हैं तो वे हमारे दुखों का हरण करते हैं।

हमारी साधना अनेकों सन्तों के अनुभव पर और पूज्य गुरुदेव के स्वयं के अनुभव पर आधारित है। अत: हमें अपनी साधना के प्रति पूरी तरह से समर्पित होना है।

बहन रैना गोयल जी

सन्त तुलसीदास ने रामचरितमानस में लिखा है –

काहू न कोउ सुख दु:ख कर दाता।
निज कृत कर्म भोग सुनु भ्राता।।

अर्थात संसार में कोई भी किसी को सुख या दु:ख नहीं दे सकता, सबको अपने ही किये हुए कर्मों का फल भोगना पड़ता है। एक और चौपाई में गोस्वामी जी ने लिखा है –

निर्मल मन जन सो मोहि पावा।
मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥

तथा

जाकी रही भावना जैसी।
प्रभु मूरत देखी तिन्ह तैसी॥

अर्थात् हम जिस व्यक्ति को जिस भावना से देखते हैं वैसी ही तरंगें हमें मिलती हैं; इसलिये यदि

हम अपने परिवार में सभी से अच्छा व्यवहार करेंगे तो हमें सभी से प्यार मिलेगा।

बहन शशि वाजपेयी जी

गीता हमें जीवन जीने की कला सिखाती है। जीवन एक पहेली है – इसको सुलझाने की कला गीता हमें सिखाती है। गीता में भगवान् की प्राप्ति के मुख्यत: दो मार्ग बताये गये हैं – ज्ञान मार्ग और भक्ति मार्ग। ज्ञान मार्ग में सब कुछ छोड़ना होता है और एकान्त में साधना करनी होती है। इसके विपरीत भक्ति मार्ग में कुछ भी छोड़ना नहीं है। सभी के बीच में रहते हुए, सभी कुछ भोगते हुए कर्तव्य कर्म करते हुए भगवान् से जुड़ जाते हैं। सभी कर्म भगवान् का ही समझ कर करते हैं तो स्वत: ही राग द्वेष से छूटते चले जाते हैं। हमें अलग से कुछ करने की ज़रूरत ही नहीं होती।

हमें सभी साधना पद्धतियों का आदर करना है, परन्तु हमारे लिये सर्वश्रेष्ठ साधन गुरु की आज्ञानुसार चलना है। पूज्य गुरुदेव महाराज के वचन हैं –

हम परमात्मा से जुड़े रहते हैं तो सभी परिस्थितियों में सम रह सकते हैं। जहाँ हो वहीं रहो, जो करते हो वही करो लेकिन हर समय में सम रहने का प्रयास करना चाहिए। जीवन में विविधता आवश्यक है; सभी परिस्थितियाँ आने और जाने वाली हैं। किन्तु साधक की परीक्षा परिस्थितियों के आने पर ही होती है कि वो किस प्रकार परिस्थिति को स्वीकार करता है।

बहन कान्ति सिंह

पूज्य गुरु महाराज ने बताया है कि हमारी साधना का आधार तप, त्याग और वैराग्य नहीं है। हमारी साधना का आधार सेवा, प्रेम और समर्पण है। भगवान् ने गीता में प्रेमी अथवा ज्ञानी भक्त को श्रेष्ठ बताया है। अध्याय 7 में भगवान् ने चार प्रकार के भक्त बताये हैं – आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी। भगवान् कहते हैं – ये सभी उदार हैं और सभी मेरे भक्त हैं परन्तु ज्ञानी तो मेरी आत्मा ही है – **ज्ञानी त्वात्मैव मे मतं।**

अध्याय 12 के श्लोक 13 में भगवान् ने प्रेमी भक्त के छ: लक्षण बताये हैं –

1. **अद्वेष्टा सर्वभूतानां** – भगवान् का भक्त वैर भाव से रहित होता है क्योंकि वह सभी में एकमात्र अपने प्रभु का ही दर्शन करता है। रामचरितमानस में भी कहा गया है – **निज प्रभुमय देखहि जगत केहि सन करहि विरोध।**
2. **मैत्र: करुण एव च** – भगवान् ने बताया है कि चार प्रकार के आचरण हमारे अन्दर प्रसन्नता को विकसित करते हैं और चित्त को शुद्ध करते हैं – मैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा। पुण्यवानों के प्रति हमें मित्रता का भाव रखना है; जो दीन-दुखी हैं, लाचार हैं – उनके लिये हमारे मन में दया का भाव होना चाहिए और यथासम्भव उनकी सहायता भी करनी चाहिए। जो हम से पद में, बल में या धन में अधिक हैं, उनके प्रति मुदिता का भाव होना चाहिए और जो अपुण्यवान लोग होते हैं, उनके प्रति उपेक्षा का भाव रखना है।
3. **निर्ममो** – ममता और आसक्ति से रहित होना चाहिए।
4. **निरहंकार** – अहंकार से रहित होना है।
5. **सम दु:ख सुख:** – दु:ख और सुख में समान भाव वाला होना है।
6. **क्षमी** – क्षमावान होना है।

उपरोक्त गुणों को धारण करके हमें भगवान् का प्रेमी भक्त बनने का प्रयास करना चाहिए।

श्री अनिल मित्तल जी

पूज्य गुरुदेव की कृपा से हम सभी इस शिविर में एकत्रित हुए हैं और हम सभी इस शिविर का लाभ उठा रहे हैं। हम सभी को अपने गुरुदेव पर पूर्ण विश्वास करना चाहिए और उन्ही पर समर्पित होना चाहिए।

पूज्य गुरुदेव की कृपा से बीसलपुर धन्य हो गया जिसको गुरुदेव ने अपने समय में साधना परिवार का मुख्यालय बनाया।

जब व्यक्ति भोगते-भोगते थक जाता है और वो भोगों से निवृत्त होना चाहता है और एकमात्र परमात्मा की शरण में आ जाता है तो उसका कल्याण सुनिश्चित है। हमें विपरीत परिस्थितियों से घबराना नहीं है। धार्मिकता निष्काम होती है और अध्यात्म में आगे बढ़ने के लिये ध्यान सर्वोत्तम साधन है। नाम के सतत स्मरण से हमारे अन्दर की बुरी वृत्तियाँ स्वत: ही निकलती जायेंगी और हम निर्मल होते चले जायेंगे। नाम स्मरण के लिये हमें माला का सहारा लेना चाहिए। निर्विकार चेतना ही ध्यान है।

श्री योगेन्द्र पाण्डेय जी

श्रीरामचरितमानस में कहा गया है कि धर्मशील मनुष्य के सभी कार्य बड़ी ही सरलता से हो जाते हैं; जैसे कि सरोवर के अथाह जल में सब मछलियाँ सदा एकरस (एक समान) सुखी रहती हैं।

गुणातीत के लक्षण गीता के अध्याय 14 में श्लोक 21 से 27 तक बताये गये हैं। इन श्लोकों का हिन्दी कविता में अनुवाद श्री दीनानाथ दिनेश द्वारा रचित **श्री हरिगीता** में उपलब्ध है जो श्री पाण्डेय जी ने अपनी स्मृति के आधार पर गाकर सुनाये और उनका आशय भी समझाया। उन्होंने बताया कि गुणातीत वो होता है जिसे न मोह होता है और न ही राग-द्वेष होता है, वह सोना और मिट्टी के प्राप्त होने पर सम रहता है, सुख-दु:ख में सम रहता है, निन्दा-स्तुति में सम रहता है। जो अव्यभिचारिणी भक्ति के द्वारा भगवान् का भजन करते हैं और गुरु की आज्ञा के अनुसार चलते हैं, वही गुणातीत होते चले जाते हैं।

ऋषि वाल्मीकि जी ने उल्टा नाम जप कर ही भगवान् को प्राप्त कर लिया और रामायण की रचना की। अगले जन्म में वही तुलसीदास बने और भगवान् के साक्षात् दर्शन किये और पुन: अवधी भाषा में श्रीरामचरितमानस की रचना की।

श्री विष्णु कुमार गोयल जी

साधना में आगे बढ़ने के लिये भावना और सकारात्मकता का बहुत महत्त्व है। हमारे अन्दर की सोच सकारात्मक होनी चाहिए। हमें व्यक्ति का सहारा नहीं लेना है, एकमात्र प्रभु का ही सहारा लेना है। सकारात्मक सोच प्रतिकूलता में भी मंगल निकाल लेती है जैसे श्री हनुमान जी की पूँछ में आग लगने पर जो प्रतिकूल परिस्थिति उपस्थित हो गई थी उसी परिस्थिति का उपयोग करते हुए उन्होंने पूरी लंका को जला डाला।

अन्त में श्री गोयल जी ने सभी साधकों का नाम ले लेकर धन्यवाद किया। जिस प्रकार सभी साधकों ने पूरी निष्ठा से अपना-अपना कर्तव्य निबाहा और जिस प्रकार से अनेक साधक दूर-दूर से शिविर में भाग लेने हेतु पधारे वह निश्चित ही सराहनीय है।

11.8.24 से 9.11.24 तक के 2100/- से ऊपर दानदाताओं की सूची

साधकगण अपने दान की राशि चैक द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में जमा करवा सकते हैं।

Swami Ramanand Sadhna Pariwar
BANK OF INDIA,
Haridwar
A/c No.: 721010110003147
I.F.S. Code: BKID0007210

Swami Ramanand Sadhna Pariwar
HDFC BANK,
Bhoopatwala, Saptrishi Chungi, Haridwar
A/c No.: 50100537193693
I.F.S. Code: HDFC0005481

साधना धाम का PAN नम्बर AAKAS8917M है।

कृपा करके जमा करवाई हुई राशि का विवरण एवं अपना नाम और पता तथा PAN या आधार कार्ड नम्बर, पत्र, फोन, E-mail अथवा WhatsApp द्वारा साधना धाम कार्यालय में अवश्य सूचित करें। जिससे आपको रसीद आसानी से प्राप्त हो जायेगी।

– **रवि कान्त भण्डारी,** प्रबन्धक, साधना धाम, मोबाइल: 09872574514, 08273494285

1	ललित मोहन जोशी, हल्द्वानी	100000	24	देवी माँ	5100
2	अविष्कार मेहरोत्रा, गुरूग्राम	104000	25	प्रकाश पोरवाल, कानपुर	5000
3	साहनी नटराजन	22000	26	मीरा मित्रा, कनाड़ा	5000
4	गुप्तदान	15100	27	आलोक / अंकुर मित्तल, बीसलपुर	4600
5	राजीव रतन सिंह, हरदोई	11000	28	विकास पोरवाल, कानपुर	3800
6	मिलन शर्मा, दिल्ली	11000	29	कमल कान्त, परागपुर (हिमाचल)	3100
7	अशोक कुमार शर्मा, लखनऊ	11000	30	प्रतीक दीक्षित, नोएडा	3000
8	अजय आनन्द, गाजियाबाद	11000	31	मनोज मिश्रा, बरेली	2500
9	संजय कुमार गुप्ता, कानपुर	10100	32	विष्णु दत्त, नई दिल्ली	2100
10	राम कृपाल कटियार, तिलहर	10000	33	विष्णु अग्रवाल, बरेली	2100
11	कनक लता चौधरी, नैनीताल	10000	34	श्वेता, चेन्नई	2100
12	हरपाल सिंह राजपूत, हरिद्वार	10000	35	सुभाष चन्द्र ग्रोवर, दिल्ली	2100
13	दीपक शर्मा, परागपुर (हिमाचल)	10000	36	रविकान्त भण्डारी, लुधियाना	2100
14	अजय भल्ला	10000	37	राकेश चन्द मित्तल, बीसलपुर	2100
15	अनिल चन्द मित्तल, बीसलपुर	7500	38	राजेश गुप्ता / कल्पना गुप्ता, बीसलपुर	2100
16	सुधीर कान्त अग्रवाल, मेरठ	7200	39	प्रमिला गौड़, देहरादून	2100
17	सूरजभान सक्सैना, कानपुर	6300	40	मनोज कुमार गुप्ता, बीसलपुर	2100
18	नीता सहगल, नई दिल्ली	6300	41	डॉ. शिल्पी जैन, मेरठ	2100
19	डॉ. आकांक्षा अग्रवाल, मेरठ	5600	42	चन्द्र प्रकाश गुप्ता, बरेली	2100
20	रचित भाटिया/त्रिशा भाटिया, दिल्ली	5100	43	अरुण कुमार सिंह, लखनऊ	2100
21	काकोली शर्मा, दिल्ली	5100	44	अंकुर / हिमानी मित्तल, बीसलपुर	2100
22	गौरव प्रताप, मेरठ	5100	45	अनिरुद्ध अग्रवाल, बीसलपुर	2100
23	दीया शर्मा, दिल्ली	5100	46	अनिल कुमार सिंह, लखनऊ	2100

श्री स्वामी रामानन्द जी साधना साहित्य

1.	अध्यात्म विकास	इन पुस्तकों में श्री स्वामी जी ने अपनी विकासवादी नवीनतम साधना पद्धति का विस्तार से वर्णन किया है।
2.	आध्यात्मिक साधना (प्रथम खण्ड)	
3.	आध्यात्मिक साधना (द्वितीय खण्ड)	
4.	Evolutionary Outlook on Life	
5.	Evolutionary Spiritualism	
6.	जीवन-रहस्य तथा उत्पादिनी शक्ति	काम शक्ति तथा अध्यात्म विषय पर स्वामी जी द्वारा विशद् व्याख्या
7.	गीता विमर्श	श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय 1-7 की स्वामी जी द्वारा विशद् व्याख्या
8.	व्यावहारिक साधना	पूज्य स्वामी जी द्वारा लिखित तीन लेखों – (1) साधकों के लिये, (2) दम्पत्ति के लिये, (3) माता-पिता के प्रति का संकलन
9.	कैलाश-दर्शन	पूज्य स्वामी जी ने कुछ साधकों के साथ कैलाश-पर्वत की यात्रा व परिक्रमा की थी। उस यात्रा एवं उनकी आत्मानुभूति का विशद् वर्णन
10.	गीतोपनिषद	श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय 8-18 की स्वर्गीय श्री के.सी. नैयर जी द्वारा व्याख्या
11.	हमारी साधना	श्री पुरुषोत्तम भटनागर द्वारा सम्पादित
12.	हमारी उपासना	
13.	साधना और व्यवहार	
14.	अशान्ति में	
15.	मेरे विचार	
16.	As I Understand	
17.	My Pilgrimage to Kailash	
18.	Sex and Spirituality	जीवन-रहस्य (प्रो. डा. लक्ष्मी सक्सेना द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित पुस्तकें)
19.	Our Worship	हमारी साधना
20.	Our Spiritual Sadhana Part-I	आध्यात्मिक साधना (प्रथम खण्ड)
21.	Our Spiritual Sadhana Part-II	आध्यात्मिक साधना (द्वितीय खण्ड)
22.	स्वामी रामानन्द - एक आध्यात्मिक यात्रा	स्वस्पष्ट प्रो. डा. लक्ष्मी सक्सेना
23.	पत्र-पीयूष	कु. शीला गौहरी द्वारा साधकों के नाम स्वामी जी के पत्रों का संकलन
24.	स्वामी रामानन्द-चरित सुधा	स्व. डा. कविराज नरेन्द्र कुमार एवं वैद्य श्री सत्यदेव
25.	स्वामी रामानन्द-वचनामृत	श्री जगदीश प्रसाद द्विवेदी द्वारा गुरुदेव की पुस्तकों से संकलन
26.	मेरी दक्षिण भारत-यात्रा	पूज्य सुमित्रा माँ जी द्वारा दक्षिण भारत यात्रा का रोचक वर्णन
27.	पत्तियाँ और फूल	भजन, पद, कीर्तन, आरती आदि का संकलन
28.	दैनिक आवाहन विधि	स्वामी जी की साधना प्रणाली पर आधारित – श्रीमती महेश प्रकाश
29.	Letters to Seekers	कु. शीला गौहरी एवं श्री विजय भण्डारी द्वारा साधकों के नाम स्वामी जी के अंग्रेजी पत्रों का संकलन
30.	आत्मा की ओर	
31.	जीवन विकास – एक दृष्टि	Evolutionary Outlook on Life का हिन्दी अनुवाद
32.	विकासात्मक अध्यात्म	Evolutionary Spiritualism का हिन्दी अनुवाद
33.	गुरु के प्रति निष्ठा	तेजेन्द्र प्रताप सिंह
34.	माँ की विभूति – भक्ति रस (भाग 1 से 5)	अनाम साधिका
35.	श्रीराम भजन माला	श्री सूर्यप्रसाद शुक्ल 'राम सरन'
36.	माँ का भाव भरा प्रसाद गुरु का दिव्य प्रसाद	मीरा गुप्ता
37.	पत्र-पीयूष सार	पत्र-पीयूष का संग्रहीत संस्करण
38.	गीता पाठ	
39.	गृहस्थ और साधना	
40.	प्रभु दर्शन	
41.	प्रभु प्रसाद मिले तो	
42.	गीता प्रवेशिका - हिन्दी, संस्कृत व अंग्रेजी में गीता का संग्रहीत संस्करण	रमेश चन्द्र गुप्त 'विनीत'
43.	अध्यात्म विषयक लेख	
44.	वन्दना, स्तुति, प्रार्थना तथा वैदिक सामान्य ज्ञान	
45.	Gita Vimarsh	श्री कृष्ण गोयल द्वारा गीता विमर्श का English Translation

दिसम्बर 2024 में साधना-धाम में होने वाले कार्यक्रम

माँ सुमित्रा जी का निर्वाण दिवस व जन्म दिवस

6 दिसम्बर 2024 को प्रातः 10 बजे रामायण-पाठ प्रारम्भ होगा।

7 दिसम्बर 2024 को माँ सुमित्रा जी का निर्वाण दिवस है, अतः प्रातः जाप के पश्चात् गंगा के पावन तट पर माँ जी को श्रद्धांजलि अर्पित की जायेगी। प्रातः 10 बजे रामायण-पाठ की पूर्ति होगी। दोपहर 12 बजे भण्डारा होगा जिसमें ब्राह्मणियों को भोजन कराकर दक्षिणा दी जायेगी। तत्पश्चात् प्रीतिभोज होगा।

8 से 14 दिसम्बर 2024 तक प्रतिदिन अखण्ड जाप होगा।

14 दिसम्बर 2024 को माँ सुमित्रा जी का जन्म दिवस मनाया जायेगा एवं प्रसाद वितरण होगा।

पूज्य गुरुदेव स्वामी रामानन्द जी का जन्म दिवस साधना शिविर

14 दिसम्बर 2024 को प्रातः 9 बजे से रामायण-पाठ प्रारम्भ होगा।

15 दिसम्बर 2024 को अपराह्न रामायण-पाठ की पूर्ति होगी। सायं 6 बजे अखण्ड जाप प्रारम्भ होगा।

16 दिसम्बर 2024, सोमवार

सामूहिक जाप	प्रातः 05.30 बजे
हवन	प्रातः 09.00 बजे
ब्रह्मभोज	मध्याह्न 12.00 बजे
प्रकटोत्सव	अपराह्न 02.00 से 04.00 बजे
भजन सन्ध्या	सायं 06.00 से रात्रि 09.00 बजे
प्रीतिभोज	रात्रि 09.00 बजे

17 दिसम्बर 2024, मंगलवार

सामूहिक जाप	प्रातः 05.30 बजे
स्वामी जी के संस्मरण एवं अनुभूतियाँ	प्रातः 09.30 बजे

18 से 21 दिसम्बर 2024 - तीन रात्रि का जन्म दिवस साधना शिविर।

साधना परिवार की कार्यकारिणी की बैठक 17 दिसम्बर 2023 को साधना-धाम के कार्यालय में होगी। एजेण्डा उसी समय प्रस्तुत किया जायेगा।

नववर्ष का स्वागत कार्यक्रम

31 दिसम्बर 2024 रात्रि 12 बजे विशेष कार्यक्रम में नववर्ष का स्वागत एवं पूज्य गुरुदेव का आशीर्वाद प्राप्त किया जायेगा। कृपया इस कार्यक्रम में भाग लेकर आने वाले नव वर्ष के लिये शुभाशीर्वाद प्राप्त करें।

तपस्थली के मन्दिर की झाँकी

तपस्थली के बाहर का दृश्य

स्वामी रामानन्द तपस्थली, जिसका नाम पहले दिगोली कुटिया था, से सभी साधक भलीभाँति परिचित हैं। विगत दो वर्ष में अध्यक्ष जी की पहल पर इस स्थान का कायापलट हो गया है। साधना मन्दिर सहित समस्त परिसर का नवीनीकरण और विस्तार किया गया है। अतिरिक्त भूमि लेकर नये रसोईघर व भोजनालय का निर्माण किया गया है और उसके ऊपर साधकों के आवास के लिये एक बड़े हॉल का निर्माण किया गया है। अतिरिक्त शौचालय व स्नानागार बनाये गये हैं। कुल मिलाकर यह स्थान अब लम्बे समय तक साधना करने के इच्छुक साधकों के लिए पूर्णतः उपयुक्त है।

यह वह स्थली है जिसको गुरु महाराज ने तपस्या के लिये चुना था और लगभग छः माह तक स्थानीय निवासियों को श्रीमद्भागवत की कथा सुनाई थी। अतः यह स्थान हम साधकों के लिये किसी तीर्थ से कम नहीं है। अब हमारा पावन कर्तव्य है कि अन्य केन्द्रों के साथ-साथ तपस्थली पर भी गुरुदेव के जन्म-महोत्सव का आयोजन किया जाये। इसी बात को ध्यान में रखकर इस वर्ष तपस्थली पर दिसम्बर माह में निम्नलिखित कार्यक्रम रखने का निर्णय लिया गया है –

दिनांक 16 दिसम्बर, 2024

प्रातः 9:00 से 11:00	सुन्दर काण्ड पाठ
दोपहर 12:00 से 1:00	ब्रह्म भोज तथा भोजन प्रसाद
अपराह्न 2:00 से 4:00	जन्मोत्सव (बधाइयाँ)
सायं 6:00 से 7:00	जाप
रात्रि 8:00 से 8:30	रात्रि भोज
रात्रि 8:30 से 9:30	संस्मरण

दिनांक 17 दिसम्बर, 2024

प्रातः 6:00 से 10:30	अखण्ड जाप एवं पूर्ति

साधकों से नम्र निवेदन है कि अधिक से अधिक संख्या में तपस्थली पहुँच कर समारोह की शोभा बढ़ायें। जो साधक जन्म दिवस समारोह में सम्मिलित होना चाहते हों वे कृपया एक सप्ताह पूर्व श्री विष्णु कुमार जी गोयल को नीचे दिये गये नम्बरों पर सूचित करने की कृपा करें –

8171700880 अथवा **8279491550**

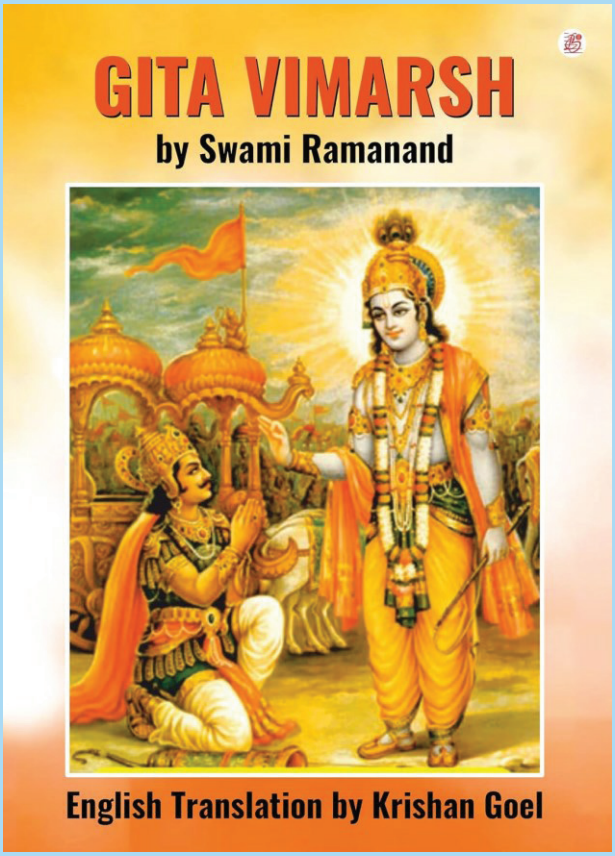

SWAMI RAMANAND

in his book

GITA VIMARSH

reveals the secret of
life of fulfillment, satisfaction and peace.

Krishan Goel

has translated the book into English
in simple and easily comprehensible language.
English translation of the book is now available
on all on-line platforms like Amazon, Snapdeal, etc.
e-book is available on google.books.com

For further information please contact Mr. Krishan Goel @ 9871551344

राम राम जी

आओ 16 दिसम्बर 2024 सोमवार को साधना धाम में पूज्य गुरुदेव स्वामी रामानन्द जी का 108वां प्रकटोत्सव पर्व सब मिलकर हर्षोल्लास के साथ मनायें ।

सभी साधकों से प्रार्थना है कि अपने व्यस्त जीवन से दो दिन का समय निकालकर सपरिवार सम्मिलित होकर इस पर्व का आनन्द उठायें एवं पूज्य स्वामी जी का आशीर्वाद प्राप्त करें ।